Regi. No.: MP HIN / 2006 / 16764 डाक पंजीयन क्र. म.प्र. भोपाल / 632 /2018 - 20

वीर निर्वाण संवत २५४५
माह- नवम्बर २०१९
अङ्क -०८ (२०१)
वर्ष -१४ (१९)

विरागवाणी

मासिक

आशीर्वाद

संत शिरोमणि प.पू. आचार्य श्री विरागसागर जी महाराज
प्रेरक : ब्र. श्री विशल्य भारती जी
निर्देशन : मुनि श्री विवर्धन सागर जी महाराज
सम्पादक : इंजी.आनन्दकुमार जैन, 9425620668
175, एम. गौतम नगर, भोपाल
सहसम्पादक : श्री देवकुमार जैन गुड़ा
४९/सी, कस्तूरबा नगर, भोपाल
मो. 09425608438
परामर्श मण्डल : डॉ. प्रो. सनत जैन, जयपुर
: श्री अनिल सेठिया महुआ (भीलवाड़ा)
: श्रीमति प्रमिला जैन 'पम्मी' कोटा
: प्रो.श्री मयंक जैन, टीकमगढ़
: श्री मुकेश जैन, पथरिया
: श्री कपूरचंद बंसल, जतारा
प्रकाशक एवं
प्रबंध सम्पादक : श्री अनूप कुमार जैन
कार्यालय : जी-१४१ गौतम नगर, भोपाल-२३
☎: 0755-2789703, मो.9425016879
Email-viragvani.jain@yahoo.com
(बैंक ड्राफ्ट 'विरागवाणी'के नाम से भेजें) पत्रिका के सम्बंध में पत्राचार एवं रचनाएँ कार्यालय के पते पर भेजें
कार्पोरेशन बैंक : A/c No. 065300201000101
IFSC CODE : CORP0000653
स्वामित्व : श्री सम्यग्ज्ञान दि. जैन विराग विद्यापीठ, भिण्ड (म.प्र.)

इस वेबसाइट से गणा. विरागसागर जी के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करें। www. ganacharyaviragsagar.com

विरागवाणी सदस्यता

परम शिरोमणी संरक्षक	-	५१०००/-
शिरोमणि संरक्षक	-	११०००/-
परम संरक्षक	-	५०००/-
संरक्षक	-	३१००/-
दस वर्ष	-	११००/-
मूल्य	-	१०/-

- **समस्त विवादों का न्याय क्षेत्र भोपाल होगा।**
- **प्रकाशित विचारों से संपादक की सहमति जरूरी नहीं हैं। वह लेखक के अपने विचार हैं।**

पल्लव दर्शिका

❖ **सम्पादकीय :** **पल्लव**
- विजयादशमी-स्वयं पर विजय का मार्ग : इंजी.आनन्दकुमार ४
- आत्मचिन्तन ५
- जिनोपदेश : श्रमणमुनि विश्वस्तसागर जी ५

❖ **प्रवचन एवं लेख**
- भार नहीं उपहार स्वरूप बनें - : श्री विरागसागर महाराज जी ६
- ध्यान : श्री विरागसागर महाराज जी १०
- शोक व धनहीन होने का कारण : आचार्य कुन्थुसागर जी महाराज १२
- प.पू. गणा.श्री विरागसागरजी के २८ वें आचार्य पदारोहण पर भक्तों का हृदयाभिनंदन- १३
- कठोर अनुशासन में भी ...: मुनि विश्वविद्सागर १४
- पात्र स्नेही : पथरिया के पूत : मुनि सुव्रतसागर १५
- ध्यान मूलं गुरु मूर्ति : श्रमण मुनि संस्कार सागर १८
- गुरु के प्रति शिष्य का... : आर्यि.विशिष्टश्रीमाता १९
- संयम की कठोर साधना : आर्यि. विजेताश्री माता २०
- संख्या में रहकर ...: समयोचित शिक्षा से साभार २०
- उपसर्ग पर उत्कर्ष... : आर्यि. विसंयोजनाश्रीमाता २१
- प्राणायाम : आर्यि. पुनीत चैतन्यमतिश्री माता जी २१
- आहार साम्रगी अक्षय... : आर्यि.विजिज्ञासाश्री २२
- प.पू. गणाचार्यश्री के लिये विनयांञ्जलि २३
- रयणसार के प्ररिप्रेक्ष्य में ... : प्रो. कमलेश जैन २७
- गणा. विरागसागर जी और उनकी रत्नत्रय वद्धिनी टीका : इंजी. दिनेश जैन ३१
- आध्यात्मिक शंका-समाधान :श्री विरागसागरजी ३७
- देव-दर्शन विधिपूर्वक करना : संस्कार सुरभि से ३८

❖ **स्वास्थ्य जगत-**
- द्राक्ष से होवे रोगों का शमन : आर्यि.विवक्षाश्री २८

❖ **कविताएँ**
- विरागसागर नाम हमें.... : पं.विजेन्द्र कुमार जैन ३४

❖ **समाचार** ४३

❖ **विराग वर्ग पहेली** ५०

संपादकीय

विजयादशमी-स्वयं पर विजय का मार्ग

इंजी. आनन्द कुमार जैन

संसार में मानवकृति के मानव तो बहुत हैं, किंतु मात्र मानवाकृति प्राप्त कर लेने से कोई मानव नहीं हो जाता। मानव तब कहलाता है जब मानव में मानवता हो, वह मानव धर्म का पालन करें। आज संसार में धर्म मानने वाले बहुत से भरे पड़े हैं कोई किसी धर्म को कोई किसी धर्म को मानता है। कोई कहता है में जैन हूँ, कोई कहता है में सिक्ख हूँ, कोई कहता है मैं मुस्लिम हूँ, तो कोई पारसी, वैष्णव, इस्लाम धर्म को या कोई अन्य धर्म को मानने वाला है। ये सभी धर्म वाद में हैं सबसे पहिले है- मानव धर्म। अग्नि में यदि उष्णता नहीं है तो वह अग्नि नहीं है, जल में शीतलता नहीं है तो वह जल जल नहीं है। हवा में यदि बहाव नहीं है तो वह हवा नहीं, मीठे में यदि मिठास नहीं तो वह मीठा नहीं। बड़ा व्यक्ति वह होता है जिसमें बडप्पन हो ऐसे ही अपने लक्षण से रहित कोई लक्ष्य नहीं हो सकता। पहिले मनुष्य जन्म लेता है फिर उसके बाद में उसे धर्म के संस्कार देकर के उस धर्म में दीक्षित किया जाता है। जो पहिले मनुष्य ही नहीं वन पाया तो पुनः अन्य धर्म का पालन कैसे कर पायेगा। जैसे किसी भवन में प्रवेश करने से पूर्व एडमीशन कार्ड दिखाना जरूरी है ऐसे ही मानवधर्म का सबसे पहले पालन करके मानव बनना है उसके बाद में अपने अन्य-अन्य धर्म को स्वीकार करना है। पहले दूध तो अच्छा हो तब खीर बने जब दूध ही नहीं तो खीर कैसे बने। तो ऐसे ही पहले वस्तु की मूल अवस्था तो पहले आटा अच्छा हो तभी रोटी बनेगी, आटा ही खराब है तो अच्छी रोटी कैसे बन सकती है। ऐसे ही मूल में मानव धर्म होना चाहिये। विजयादशमी स्वयं पर विजय का पर्व है। धर्म तो कहता है कि स्वयं को जानों स्वयं को पहचानों, स्वयं में समा जाओं तो भगवान बन जाओंगे। लेकिन मार्ग कठिन है। कई मार्ग में तो ऐसा होता है चले विश्वविजयी बनने पर विजय स्वयं पर पा न सके। विजय प्राप्त करने का सबसे पहला सोपान स्वयं को जीतना है। बिना अच्छा इंसान बने कोई भी आत्मा धर्मात्मा, महात्मा, पुण्यत्मा, परमात्मा नहीं बन सकता।

परमपूज्य १०८ गणाचार्य श्री विरागसागर जी महाराज ने प्रवचनों में बताया कि जगत का हर प्राणी केवल मृत्यु तक ही सोच पाता है मृत्यु के बाद तक किसी की सोच नहीं पहुंच पाती, परिणाम यह निकलता है कि हमारे जीवन में बहुत बड़ा धोका हो जाता है। हम रूपया, पैसा, बंगला, धन दौलत आदि लौकिक चाह तो रखते हैं लेकिन पारमार्षिकता से हम शून्य रह जाते हैं। अतः जब तक हमें यह ज्ञान नहीं होगा कि हमें आत्महित करना है, मेरे अन्दर भी भगवत् शक्ति की जागृति हो इस प्रकार के भाव नहीं जागते। तब तक सही मात्रा में वैराग्य नहीं होगा। दुनियाँ संसार की सुविधाओं की ओर कदम बढ़ाती है लेकिन जब तक संसार की सुविधाएँ व्यक्ति को अच्छी लगती हैं तब तक मोक्ष मार्ग की ओर लक्ष्य ही नहीं जाता इसलिये बाह्य संसार को छोड़ना आवश्यक होता है। आज के समय में हमारे देश में अन्य देशों की अपेक्षा आर्थिक उपलब्धि भले कम हो लेकिन सत्य यह है कि हमारे देश वासियों में धार्मिक भावना है।

आत्मचिन्तन

(प.पू. आ. श्री १०८ विमलसागर जी महाराज की नित्य डायरी से साभार ४.११.१९८४)

।। ऊँ ह्रीं णमो उवज्झायाणं।।

हे आत्मन्! भव्य प्राणी चार घातिया कर्म के कारण धर्म कर्म सब भूलजाते हैं। इन कर्मों (ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, मोहनी, अन्तराय) में सर्व प्रथम मोहनी कर्म का नाश ही पूर्णज्ञान की प्राप्ति में कारण है उसके बाद उपान्त समय में (तीन कर्म ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, अन्तराय) का क्षय होते ही भव्य प्राणी जीवन्मुक्त परमात्मा अन्तरात्मा से होता है तभी अरहंत केवली वीतराग सर्वज्ञहितोपदेशी जन जिनेन्द्र जीवन्मुक्त कहलाते है और अपनी पूर्ण अनुभूति प्राप्त कर अघातिया कर्मों (वेदनी, आयुनाम गोत्र) का नाशकर अविनाशी अविचलशांत निरंश अविकार अचल अटल अष्टगुण सहित सम्मत णाण दंसणं सूक्ष्मत्त अवगाहनत्व, अगुरूलघुत्व, वीर्यत्व, अव्यावाधत्व सिद्धपरमात्मा कहलाते हैं। जो जामन मरण से रहित अष्ट गुण सहित होते हैं जो संसारर्णन में कभी भी लौटकर नहीं आते अपने स्वभाव में हमेशा के लिए अपने में निमग्न हो जाते हैं। अत: हे विमलात्मन तुम भी आलसी प्रमादी मत बनो नहीं तो संसार के जो ज्ञानावरणादि कर्मों का नाशकर सिद्धपरमात्मा कहलाते हैं और उनकी दृष्टि पर अपनी दृष्टि करते हैं। वैसी ही सृष्टि कहलाती है अत: अपनी सृष्टि ऊर्धस्वरूप अग्नि की लौकी तरह अर्थात् उस सृष्टि का नाम ही अद्‌भुत अविनाशी सिद्ध परमात्मा को सिद्ध बनने के लिए नमस्कार तीर्थंकर करते हैं तब सिद्ध बनते हैं अत: सर्व प्राणी मात्र की अपनी सृष्टि सिद्ध प्रसिद्ध बनना ही मुख्य कर्तव्य है।

जिनोपदेश

संकलन- समाधिस्थ मुनि विश्वस्त सागर जी महाराज की डायरी से संकलित

न हि तिष्ठति राजसम्।। १/५५।। क्ष.चू.

अर्थ- तेजस्विता छिपी नहीं रह सकती।

स्तायुषि हि जायेत, प्राणिनां प्राण रक्षणम्।। ३/१९।। क्ष.चू.

अर्थ- आयु के होने पर प्राणियों के प्राणों की रक्षा होती ही है।

दु:ख स्यानन्तरं सौख्यं-मतिमात्रं हि देहिनाम्।। ३/३५।। क्ष.चू.

अर्थ- जीवों के दु:ख के बाद अत्यन्त सुख होता है।

क्रूरा: किं किं न कुर्वन्ति, कर्म धर्म पराङ्मुखा:।। ४/४।। क्ष.चू.

अर्थ- धर्महीन दुष्टजन किस किस खोटे कार्य को नहीं करते हैं ? किंतु सब कर डालते हैं।

निर्निंत्तमपि ध्वन्ति, हन्त जन्तून-धार्मिका:।
किम्पुन: कारणाभासे, नो चेदत्र-निवारक:।। ४/५।। क्ष.चू।।

अर्थ- खेद है कि पापीजन जब कारण बिना ही प्राणियों को मार डालते हैं। तब झूठ-मूठ कारण के मिल जाने पर रोकने वाले न मिले तो फिर कहना ही क्या है।

न ह्यकालकृतं कर्म, कार्यनिष्पादनक्षमम्।। ४/२३।। क्ष.चू.

अर्थ- असमय में किया गया परिश्रम कार्य को पूरा करने में समर्थ नहीं होता।

न ह्यनिष्टेष्ट-संयोग-वियोगाभमरुन्तुदम्।। ४/२८।। क्ष.चू.

अर्थ- अनिष्ट संयोग एवं इष्टवियोग हार्दिक पीड़ा जनक होते हैं।

विपदोऽपि हि तद्‌भीति-र्मूढानां हन्त बाधिका।। ४/२९।। क्ष.चू.

अर्थ- खेद है कि मूर्खों के विपत्ति से भी विपत्ति का भय अतिशय दुखदायक होता है।

न हि सन्तीह जन्तुना-मपाये सति बान्धवा:।। ४/३०।। क्ष.चू.

अर्थ- इस लोक में आपत्ति के आ जाने पर जीवों के कोई भी बंधुजन सहायक नहीं होते।

भार नहीं उपहार स्वरूप बनें

प्रवचनकार -परम पूज्य राष्ट्रसंत गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर जी महाराज

बन्धुओ! आज हम देख रहे हैं कि हमारी संस्कृति निरन्तर ह्रास को प्राप्त होती जा रही है। जिसे अनेकों तीर्थंकरों, गणधरों, आचार्यों ने और अनेकों विद्वानों तथा सभ्य परिवारों ने सींचा आज वह संस्कृति नीचे की ओर गिरती चली जा रही है। आवश्यकता है हम अपनी दृष्टि को उस संस्कृति की ओर ले जायें।

कहा जाता है जिस परिवार में जन्म लो तो कुछ समय उस परिवार के लिए निकालिये। जिस समाज में जन्म लो तो कुछ क्षण उस समाज के लिए तथा जिस नगर, देश में जन्म लो तो उसके लिए भी कुछ समय देने का प्रयास कीजिए और इसके साथ अपनी आत्मा के हित में भी प्रयत्न कीजिए।

जिन्हें अपनी, अपने परिवार, समाज, देश, राष्ट्र की खबर नहीं होती हैं जो इसके विषय में कभी विचारते नहीं हैं वे जीते जागते मुर्दे कहे जाते हैं। चलते-फिरते शव की तरह माने जाते हैं। संभवत: ऐसे लोगों से यह धरा, यह धरती भारभूत हो रही है। हमारे आचार्य कहते हैं- हे आने वाले प्राणी! हे इस जगत में रहने वाले प्राणी! संसार में रहो, इस पृथ्वी पर रहो लेकिन वजन के रूप में नहीं रहो। जीवन जियो तो भार के रूप में नहीं उपहार के रूप में जियो। जो उपहार की तरह जीवन जीता है वह मर कर भी अमर हो जाता है और जो भार के रूप में जीवन जीता हैं तो जीते जी मृत की तरह कहे जाओंगे कोई उपयोगिता तुम्हारी, तुम्हारे जीवन की नहीं रहेगी।

आज हमें आवश्यकता है अपनी संस्कृति को देखने की, हमारा परिवार पहले क्या था ? आज क्या है ? हमारी समाज पहले क्या थी ? आज क्या है ? अपना देश पहले क्या था ? आज क्या है ? जब हम इन आदि बिन्दु को वर्तमान से जोड़ते हैं तो लगता है बहुत कुछ हास हुआ है जिसे हम विकास सोचते रहे। ह्रास जिस गति से हुआ है विकास उतनी मात्रा में नहीं हो सका।

आज हमारे आचरण, हमारी व्यवहारिकता, हमारे संस्कार, परिवार से उठते-उठते चले जा रहे हैं। बन्धुओ! जहाँ संस्कार ही नहीं रहेंगे, वहाँ संस्कृति कैसे रहेगी क्योंकि-

संस्कारात् संस्कृति जेया धन्य: स ग्रहाश्रमा।
परिवार देश राष्ट्रे च सदा-सदा विर्वर्धनम्।। लेखक- आ.श्री वि.सा.महा.।।

संस्कारों से ही संस्कृति जीवित रह सकती है संस्कारों से ही संस्कृति की रक्षा हो सकती है। संस्कृति का विकाश हो सकता है। संस्कारों से ही संस्कृति की उन्नति और उत्थान हो सकता है। संस्कारों से व्यक्ति गरीबी में भी सुख की श्वास ले सकता है। संस्कारों में पला हुआ व्यक्ति अनपढ़ होकर भी सम्मान पा सकता है। संस्कारों में जिसका जीवन व्यतीत हुआ है वह वर्तमान में भी स्वर्ग सा आनंद पा सकता है। और यदि संस्कार नहीं हैं तो यह धन, यह दौलत, यह परिवार, यह कुटुम्ब तुम्हारे लिए शांति नहीं दे सकेगा। यह रूपया-पैसा ज्यादा दिन तक नहीं टिकेगा। वह एक दिन समाप्त हो जायेगा उस समय आपको अपना बिलखता हुआ परिवार नजर आयेगा और आप सोचेंगे कि काश हम पहले से सावधान रहते तो आज यह दिन नहीं देखना पड़ता।

वर्तमान में संस्कृति की आहूति देने वाले, संस्कारों को नष्ट करने वाली सबसे बड़ी बीमारी, सबसे बड़े दो रोग खड़े हुए हैं। वे हैं- व्यसन और फैशन। एक ओर व्यसन से व्यक्ति का विनाश हो रहा है तो दूसरी ओर फैशन से भी व्यक्ति का विनाश हो रहा है। पुरुषों का विनाश व्यसन से तो महिलाओं का विनाश फैशन से हो रहा है।

जिन व्यसनों को हमारे शास्त्रों में मात्र पाप नहीं महापाप कहा है। आमतोर पर कहा जाता है कि- पाप करने वाला व्यक्ति दुर्गति को प्राप्त होता है। पाप करने से व्यक्ति की इज्जत, सम्मान समाप्त हो जाता है। पाप करने से प्राणी को दु:खों की प्राप्ति होती है तो फिर महापाप करने से क्या फल प्राप्त होगा इसकी तो हम कल्पना ही नहीं कर सकते हैं।

हमारे शास्त्रों में पाप पाँच कहे गये हैं- हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह ये पांच पाप है। महापापों का भी व्याख्यान हमारे आगम में आया है वे पाँच नहीं सात होते हैं-

द्यूतमांससुरा वेश्या, चौर्याखेट पराङ्गना।
महापापानी सप्तानी व्यसनानी तजेब बुझः।।

द्यूत यानि जुआ, मांस सभी जानते ही है कि- दो इंद्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय जीवों का जो क्लेवर है वह मांस संज्ञा को प्राप्त है। सुरा यानि शराब, वेश्या, बाजारु स्त्री, चोरी- बिना अनुमति के किसी की सामग्री उठा लेना, दूसरों को दे देना और खेट यानि ऐसा खेल जिसमें दूसरों के प्राण संकट में आ जाएं चाहे वह पशु हो, मनुष्य हो, पक्षी हो, पतंगे हो, ये सभी आखेट (सिकार) ही कहे जाते हैं। ये सातों पाप नहीं महापाप है इसलिए हे ज्ञानियो! हे मनीषियो! हे विद्वानो! यदि तुम सुख से रहना चाहते हो, आनंद से रहना चाहते हो, इस लोक और परलोक में सुखी रहना चाहते हो तो इन महापापों का त्याग कर दीजिए।

तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी हमें जाग्रत कर रहे हैं और बतला रहे हैं कि यदि इन व्यसनों में तुम्हारा जीवन व्यतीत हो रहा है तो समझ लीजिए बेहोशी में तुम्हारा समय गुजर रहा है। अरे भैया! तू अपने अगले भव के विषय में भी कुछ सोच कि मृत्यु के बाद तुम्हारी क्या हालत होगी। इसे व्यक्ति सोच ही नहीं पाता है और ऐसे कार्य कर लेता है जिससे उसे नरक निगोद के दुख भोगना पड़ते हैं।

व्यक्ति से यदि पूछा जाए कि क्या तुम नरक जाना चाहते हो, क्या सुअर बनना चाहते हो, गंधे, कुत्ते बनना चाहते हो नाली में विष्टा के कीड़े बनना चाहते हो तो हर व्यक्ति मना करता है कि मैं इस प्रकार का नहीं बनना चाहता हूँ। लेकिन प्रायः व्यक्ति काम वैसे ही करता है। यहाँ उसे उन दुखों की वेदना का पता नहीं रहता है लेकिन जब वे नरक आदि के दुख जीव को प्राप्त होते हैं तब वह घबराता है और पश्चाताप करता है कि यदि इस प्रकार की वेदना का पता मुझे पहले होता तो मैं कभी ऐसे काम नहीं करता जिससे ये दुख मुझे मिलते।

बन्धुओ! ये सत्य है कि- तीर्थंकर भगवान न तो किसी को स्वर्ग में ले जाकर रखते हैं न नरक में ले जाकर रखते हैं वे तो केवल ज्ञान कराते हैं। उपदेश देते हैं कि- आप अच्छे कार्य करोगे तो स्वर्ग मिलेगा और यदि बुरे कार्य किये तो आपको नरक, पशु-पक्षी आदि की पर्याय को प्राप्त होंगे अब जो आपको अच्छा लगे वह करो।

जैन दर्शन इतना स्वतंत्र दर्शन है यहाँ कहा गया है कि कोई भी भगवान, तीर्थंकर किसी को स्वर्ग और नरक नहीं देते हैं। ध्यान रखिये आज का व्यक्ति इतना अंजान होता जा रहा है वह पाप स्वयं करता है और दोष भगवान को देता है कि भगवान की मरजी है भगवान जैसा चाहेंगे वैसा ही तो होगा। बन्धुओं! यह तुम्हारी गलत धारणा है भगवान के उपदेश का आप गलत प्रचार कर रहे हो। भगवान कभी नहीं चाहते हैं कि आप नरक में जाओ, भगवान कभी नहीं चाहते हैं कि- आप पुश-पक्षी हो आप लूले-लगड़े हो, दरिद्र बनो। भगवान से आपका कौन सा बैर-भाव है वे तो उपदेश देते हैं कि- आप तो सारी दुनियाँ दारी को छोड़ों आत्महित के लिए कदम बढ़ाओं और मोक्ष प्राप्त करो। भगवान हम सबको रास्ता बताते हैं लेकिन संस्कारों के अभाव में ये बाते हमें समझ में ही नहीं आती हैं व्यक्ति के गले उतर ही नहीं पाती, कितनी बार तो ऐसी बाते सुनने का अवसर ही नहीं मिल पाता है कदाचित अवसर मिल भी जाये तो दूसरे कान से सुनी हुई सारी बाते निकाल देते है। हम लोग राजस्थान के जेठाना ग्राम में रूके वहाँ से मांगलिया बास के लिए विहार हुआ। वहाँ एक स्कूल था स्कूल के बच्चों ने धूम-धाम से संघ की आगवानी की रात्रि विश्राम वहीं हुआ। संध्या का समय था तो मैने एक टीचर को देखा वे पूरे समय वहीं बाहर रहे कभी गेट के पास आते कभी फिर पीछे चले जाते। दूसरे दिन जब वहाँ से विहार हुआ तो कुछ समय बाद वे किसी गाड़ी से वहाँ तक पहुँचे, मैंने देखते ही उन्हें पहिचान लिया। मैंने कहा- आप तो उस स्कूल के टीचर हो फिर भी वे कुछ नहीं बोल सके। मैंने कहा- क्या बात है वहाँ भी आपको देखकर लग रहा था मानो कुछ कहना चाहते हो लेकिन आप कुछ नहीं बोले। तो उन्होंने चरणों में प्रणाम किया और बोले मुझे आपसे दूर रखने वाली एक बुरी आदत थी कल मैं उसी के कारण आपके पास नहीं आ पाया। लेकिन रात्रिभर मैं यही सोचता रहा कि इतने बड़े दिगम्बर संत हमारे पुण्य से यहाँ आये है आज तक कभी भी इतने संतों के दर्शन मुझे नहीं मिले और अभी भी मैं इनके पास नहीं पहुँच पा रहा हूँ इन त्यागमूर्ति के दर्शन न कर सका तो मेरा जीवन बेकार है और मन बनाकर मैं उस बुरी आदत (शराब पीने) का त्याग कर आपके पास आया हूँ।

बन्धुओ! यह सत्य है जब तक व्यक्ति के जीवन में एक भी व्यसन रहेगा तब तक धार्मिकता उत्पन्न नहीं हो सकती लेकिन आज का व्यक्ति बेशर्म हो गया है जानकारी मिली कुछ ऐसे भी लोग है जो शराब आदि अपवित्र वस्तुओं का सेवन करते हैं और भगवान का पृक्षाल भी कर लेते हैं ध्यान दीजिए। यह तो महापाप में भी महापाप कमाने की तरह है ऐसा व्यक्ति मुनियों के चरणस्पर्श करने का, आहार दान देने का और भगवान के अभिषेक करने का अधिकारी नहीं होता है। इसलिए कहा जाता है थोड़ा पुरुषार्थ कीजिए पुरुष हो तो पुरुषता भी होनी चाहिए बुरी आदतों पर ब्रेक होना चाहिए।

पूज्य आचार्य शांतिसागर जी महाराज ने अपने अंतिम उपदेश में यही कहा था। बाबानो भीरु नका संयम धारण करा, संयम धारण केले सिवा मुक्ति नाहि (भैया डरो नहीं संयम धारण करो संयम धारण किये बना मुक्ति नहीं होता) और संयम धारण के भाव तभी जाग्रत होंगे जब व्यक्ति व्यसनों का त्याग करेगा।

वर्तमान में जो दुर्गति को प्राप्त हुए है उन के मन से पूछो क्या तुम यहाँ आना चाहते थे तो वे यही बोलेगे नहीं हम यहाँ नहीं आना चाहते थे फिर भी आ गये। उस समय मुझे बहुत कुछ समझाया गया था लेकिन उस समय व बाते मेरे हृदय तक नहीं पहुँची थी मुझे अच्छी नहीं लगती थी। उस समय व्यसनों में लिप्त होने के कारण सभी की अच्छी बाते मुझे सुई की तरह चुभन उत्पन्न करती थी। मन: संताप का कारण बनती थी मैं उन्हें सुनना भी पसंद नहीं करता था फलत: मैं अपने जीवन को सम्हाल नहीं सका और आज इन दारुण दु:खो को भोग रहा हूँ।

बन्धुओ! अपना हित चाहने वालों को जीवन में कभी व्यसनों का सेवन नहीं करना चाहिए इन व्यसनों से सदैव-सदैव दूर रहना चाहिए।

आज नारी समाज केवल एक विज्ञापन का स्थान लेती चली जा रही है। फेंशन में इतनी बिकती जा रही है की बाजार से निकलते देर नहीं होती और वह फेंशन उसके ऊपर सबार हो जाता है।

पुरुषों में व्यसन के कारण जो संस्कार नष्ट हो रहे हैं तो महिलाओं में फेंशन के कारण संस्कार लुप्त होते जा रहे हैं। सोचिए आप बच्चों की माँ हैं और माँ ही जब इस प्रकार संस्कारों से विहीन होगी तो बेटे पर क्या असर पड़ेगा? आप कितनी भी कल्पना करते रहो कि हमारा बच्चा राम बने, हमारा बच्चा महावीर बने, हमारा बच्चा बहुत अच्छा इंशान बने, कैसे बनेगा? जब तक सांचा ही सही नहीं होगा तो उसमें ढ़ला हुआ मिट्टी का आकार कैसे सही आयेगा वह आकार कभी सही नहीं बन सकता है।

आप के बच्चे जितना माता-पिता से नहीं सीख रहे हैं उतना नेट और टी.वी. से सीख रहे हैं मोबाइल से सीख रहे हैं। कितनी बार मैंने ऐसे भी बच्चों को देखा है जिन्हें नाक पोंछना भी नहीं आती लेकिन वे मोबाइल चलाते हैं। आखिर में ये संस्कार आये कहाँ से कहीं बाहर से नहीं अपने ही परिवार से आये हैं। या तो आपने बच्चों को २४ घण्टे अकेला छोड़ देते हो या फिर २४ घण्टे अपने पास ही जमाकर रखते हो। ये ही दो बाते बच्चों में बिगाड़ उत्पन्न करती हैं।

आज बाहर की पढ़ाई जितनी बरदान है उतनी ही अभिशाप भी बन रही है। एक समय था जब माता-पिता अपनी दृष्टि में बच्चों को रखते थे, उनकी छत्रछाया में बच्चों का विकास होता था। हर समय ध्यान रखा जाता था कि हमारा बच्चा कैसे संस्कारों में जी रहा है लेकिन आज कितने माता-पिता हैं जो इन बातों का ध्यान रखते हैं। मैं यह नहीं कहना चाहता हूँ कि बच्चों को पढ़ायें न, ना हि यह कह रहा हूँ कि उन्हें बाहर मत भेजो। कोई परेशानी नहीं है पढ़ाईये और पढ़ाई यदि बाहर अधिक अच्छी है तो वहाँ पर भी पढ़ाना चाहिए किन्तु संस्कारों का भी ध्यान रखना चाहिए।

महात्मा गांधी जी को जब वेरेष्ट्री पढ़ने विदेश जाना था तो उन्होंने अपने माता-पिता के सन्मुख बात रखी तो उनके माता-पिता ने पहले तो मना कर दिया। जब गांधी जी ने जोर दिया और कहा कि- आप जिन बातों से घबरा रहे हैं विश्वास रखिए हमारे अंदर वह कोई बुराई नहीं आयेगी। गांधी जी के आग्रह को देख पुतली बाई हाथ पकड़कर गांधी जी को दिगम्बर जैन साधु के पास ले गई और गांधी जी से कहा- आप इन्हें हाथ जोड़कर नमस्कार कीजिए गांधी जी ने नमस्कार किया फिर उनकी माँ ने महाराज से कहा- कि मेरा बेटा विदेश पढ़ने जाना चाहता है आप इसे अच्छा आशीर्वाद दीजिए। महाराज ने गांधी जी से कहा- बेटा तुम बाहर जा रहे हो अच्छी बात है बहुत अच्छी पढ़ाई करना लेकिन मेरी तीन बातों का ध्यान रखना, विदेश में जाकर कभी मांसाहारी नहीं बनना, कभी शराब नहीं पीना और किसी भी स्त्री के ऊपर बुरी दृष्टि नहीं

डालना इन तीन नियमों को प्रसाद के रूप में लेकर जाओ तुम्हारी उन्नति और उत्थान होगा।

बन्धुओ! है कोई माँ ऐसी जिसने पुतली बाई की तरह बच्चों के संस्कारों की रक्षा की हो, उसे कहीं भेजने के पूर्व गुरुओं से नियम दिलाये हों, नहीं दिलाये होते तो निश्चित है आपका बेटा बिगड़ेगा ही और फिर आप कुछ नहीं कर सकोंगे।

जिस माँ ने अपने बेटे को भगवान के दर्शन करना सिखा दिये तो बच्चे का जीवन दर्शन ही सुरक्षित हो जायेगा। वह भगवान न बन सके तो एक अच्छा इंसान जरूर बन जायेगा। यदि आप निर्ग्रन्थ गुरुओं के पास बच्चों को लाये हो तो तुम्हारे बच्चे में कभी दुर्गुण नहीं आयेंगे। मैं देख रहा था कल वैयावृत्ति के समय कुछ पिता अपने छोटे-छोटे बच्चों को लाये थे और वे सिखा रहे थे बेटा ऐसे नहीं ऐसे दबाओं, और बच्चे बोल रहे थे कल रविवार है मैं तो आहार दूँगा। पिता ने कहा- अवश्य बेटा मैं तुझे आहार दिलाऊँगा। कोई माँ कहीं ऐसा न सोचने लग जाये कि- कौन व्यवस्था बनाये सोले के कपड़े डाले, ध्यान रखना, आज की आपकी तपस्या, आपकी थोड़ी सी मेहनत कल बालक की जिंदगी में नई रोशनी प्रदान करेगी। जिस रोशनी में केवल बालक ही नहीं आप और आपका सारा परिवार रहेगा। आपको गर्व होगा कि हमारे बेटे ने तो सारे वंश के नाम को उज्जवल कर दिया है।

बन्धुओ! संस्कार जीवन को पावन पुनीत कर देते हैं। आप बच्चों को उपहार के रूप में केवल नये कपड़े ही न दें केवल टॉफी, विस्कुट और मिठाई ही न दें उन्हें सुसंस्कार दें। आज का व्यक्ति कितना बदलता जा रहा है बहुत सारे लोग जन्म दिन के दिन केक काटते हैं। काटने की नहीं बनाने की बात करो। परम पूज्य गुरुदेव विमलसागर जी कहते थे काटने का काम कैची करती है जोड़ने का काम सुई और धागा करता है। कैची नहीं सुई और धागा बनिये। तोड़ने का नहीं जोड़ने का दो को एक करने का काम कीजिए। व्यक्ति मोम्बत्ती बुझाते हैं। पहले जलाते हैं फिर उसे बुझा देते हैं। आपको पता है धर्मसभा में दीप प्रज्जवलन किया जाता है लेकिन बुझाया नहीं जाता। हमारे जीवन में संस्कारों का एक ऐसा दीप जले जो कभी न बुझे। भारतीय संस्कृति बुझाने की नहीं जलाने की संस्कृति है। अपना यह धर्म का बीज, संस्कारों का बीज हमेशा जगमगाता रहे कभी बुझे ना। माँ बच्चों से इतना लाड़ प्यार करे कि बच्चा कहीं भी क्यों न हो उसकी आँखों में झूलता रहे। माँ जब बच्चे को देखे तो मात्र उसके शरीर को ही नहीं उसके संस्कारों को भी देखें।

अच्छी माँ जगत में बहुत सारी होती है लेकिन मैं चाहता हूँ माँ केवल अच्छी ही नहीं सच्ची भी होनी चाहिए जो बच्चों के संस्कारों को देखें, उसी परिकल्पना में सोये और उसी परिकल्पना में उठे कि- हमारा बच्चा अच्छे संस्कारों में रहे। ध्यान रखिये तरक्की केवल पढ़ाई से नहीं होती केवल सर्विस और वेतन से नहीं होती है तरक्की तो संस्कारों से होती हैं। अगर बेटे में अच्छे संस्कार है तो आप उसे कुछ भी न दे फिर भी वह ऊँचाईयों को प्राप्त कर लेगा और यदि संस्कार अच्छे नहीं है उसे आपने बहुत कुछ दिया है फिर भी उसका जीवन दुखमय व्यतीत होगा। जिसे देखकर माता-पिता की आँखों में आँसू भरे रहते हैं। इसलिए बच्चों में अच्छे संस्कार दें। अभी तक २४ घण्टे आप बच्चों को अपने साथ रखते हैं तो आज से २३ घण्टे आप बच्चों को अपने साथ रखो और १ घण्टे आप बच्चों के साथ रहें अथवा २४ घण्टे आपका बच्चा बाहर रहे लेकिन एक घण्टे तो कम से कम उसे बुलाकर अपने पास बिठाना चाहिए तभी संस्कृति सुरक्षित रह सकती है।

बच्चों को यदि आपने महाराज के पास आना सिखा दिया तो समझ लीजिए आपका बच्चा कभी अपने माता-पिता को नहीं छोड़ेगा, वह कभी बिगड़ेगा नहीं, कभी शराब नहीं पियेगा, कभी उसमें गलत संस्कार नहीं पड़ेगे। जिस बालक ने अपने हाथ में भगवान का अभिषेक करने के लिए कलश पकड़ लिए है वह बालक कभी शराब की बोतल नहीं पकड़ेगा। जिस माँ ने अपनी बेटी के हाथ में दहेज के साथ धर्म की पुस्तक थमा दी है उसकी बेटी सदैव धर्म संस्कार के साथ जीवन व्यतीत करेगी। हम बच्चों को देंखे कहीं उनमें बुरे संस्कार तो नहीं आ रहे हैं क्योंकि आप रोज देखोंगे तो गीली मिट्टी को आप सम्हाल सकोगे और यदि आपने काफी दिनों के बाद ब्रेक लगाने का प्रयत्न किया तो वह सूखी मिट्टी सांचे में ढ़ल नहीं पायेगी। वह टूट जायेगी। ऐसे बच्चे माता-पिता से संबंध तोड़ देंगे लेकिन उनके अनुकूल नहीं चल पायेंगे इसलिए इन आवश्यक बातों का अवश्य ध्यान रखिए। हम इन संस्कारों से अपने परिवार को सींचे समाज, देश, नगर और राष्ट्र को सींचे दुनियाँ को यह भी दिखायें कि हम नाम के जैन नहीं आचरण से भी जैन है सच्चे जैन है तो सभी को आपको पाकर गौरव होगा।

ध्यान

प्रवचन- परम पूज्य राष्ट्रसंत गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर जी महाराज

नमोऽस्तु भगवन मैं दो घड़ी पर्यन्त सर्व सावद्य योग का त्याग कर प्रात: काल की सामायिक करता हूँ।

खड़े होकर क्रमश: चारों दिशाओं में एक-एक कायोत्सर्ग कर तीन आवर्तन और शिरोनति पूर्वक अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु, जिनधर्म, जिनागम, जिनचैत्य, जिन चैत्यालय को नमस्कार कर, पद्मासन, अर्धपद्मासन अथवा जिस आसन से अधिक समय तक निराकुलता से बैठ सकें ऐसा पर्यंक (सुखासन/पाल्ति) लगाकर स्थिर रीढ़ की हड्डी को सीधा करके बैठें। बायें हाथ पर दांया हाथ रख कर आंखों को बंद अथवा नाशाग्र करें।

ओ ऽ ऽ ऽ म्, ओ ऽ ऽ ऽ म्, ओ ऽ ऽ ऽ म्

ओम् नम: सिद्धेभ्य:, ओम् नम: सिद्धेभ्य:, ओम् नम: सिद्धेभ्य:

१. णमो अरिहंताणं, - - - - २ - - - - ३ - - - - ३ - - - - ४ - - - - -

ऐसो पंच णमोकारो, सव्वपाप प्रणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसु पढ़मं हवई मंगलं।।

१. चत्तारि मंगलं - - - - - २ - - - - ३ - - - - ३ - - - - ४ - - - - -

१. चत्तारि लो गोत्तमा - - - - २ - - - - ३ - - - - ३ - - - - ४ - - - - -

१. चत्तारि शरणं पव्वज्जामि - २ - - - - ३ - - - - ३ - - - - ४ - - - - -

ओ ऽ ऽ ऽ म्, ओ ऽ ऽ ऽ म्, ओ ऽ ऽ ऽ म्

आज पूर्व पुण्योदय से हे प्रभु ध्यान, सामायिक के भाव हो रहे हैं। सामायिक ही देव वंदना कही जाती है। यद्यपि सामायिक का सामान्य अर्थ होता है कि निर्धारित समय पर्यन्त अपने परिणामों को समता में रखना। मुनिजन जीवन पर्यन्त इस संकल्प को रखते हैं। वे जीवन पर्यन्त सामायिक अर्थात् देववंदना नियम से तीन टाइम करते हैं जिसमें अकृतिम चैत्यालयों की वंदना करते हैं। यह सत्य है कि- आत्म विशुद्धि के बिना सामायिक के भाव नहीं होते हैं। धर्म के प्रति श्रद्धा के बिना सामायिक के भाव नहीं हो सकते हैं। जब धर्म के प्रति सच्ची श्रद्धा होती है तभी हमारे भाव आत्म कल्याण के हो पाते हैं। कर्मों से छुटकारा पाने के भाव होते हैं, अनादि काल से लगे हुए कर्मों को धोने के भाव होते हैं।

सम्यग्दृष्टि जीव के अंदर एक ऐसा सम्यग्ज्ञान जाग्रत होता है ऐसा विचार, एक ऐसा चिंतन जाग्रत होता है जो आज तक नहीं हुआ। मिथ्यात्व के उदय में मिथ्यादृष्टि को मिथ्यारूप परिणाम उत्पन्न होते हैं उसे धर्म का ज्ञान नहीं होता। भगवान पर विश्वास नहीं होता, जिनवाणी और सच्चे गुरुओं पर विश्वास नहीं होता तथा इनके द्वारा बताये गये मोक्षमार्ग पर भी विश्वास नहीं होता। वह बाह्य दुनियाँ में ही भटकता है उसे ही सब कुछ मान बैठता है और यह भूल जाता है कि जब शरीर से विदा लेंगे तो कुछ भी मेरे साथ नहीं जायेगा। सारा धन, परिवार, कुटुम्ब, मकान, दुकान सब यहाँ का यही रह जाता है। जन्म से जिसे पाला बनाया वह परिवार सब यही रह जाता है है कुछ भी साथ में नहीं जायेगा सभी को अकेले ही जाना पड़ता है। जन्म के बाद आयु के पूर्ण होने पर मृत्यु होती है और मृत्यु के पश्चात् पुन: दूसरी पर्याय में जन्म लेना होता है। फिर वहाँ भी वहीं सिस्टम प्रारंभ होता है परिवार का परिचय दुकान, मकान, घर, परिवार आदि के बीच में रहना उसी में रमना इसी प्रकार व्यक्ति के अनंत भव व्यतीत हुए हैं। सम्यग्ज्ञानी जीव इस सत्य को स्वीकार करता है और सोचता है जिस भी पर्याय में यह जीव रहा, जिन-जिन गतियों में परिभ्रमण किया, लेकिन सुख किसी भी पर्याय में प्राप्त नहीं हुआ। यह जीव किसी न किसी प्रकार के दुखों से दुखी रहा और ऐसी ही दुखमय पर्याय व्यतीत करता रहा।

क्षणिक उपलब्धियों में जो अनुकूलतायें मिली उनमें ही सुख समझता रहा। वास्तव में जिन पदार्थों में सुख की परिकल्पना की वहाँ सुख था ही नहीं केवल दुख ही था फिर भी अज्ञानता में उसे सुख माना था लेकिन ज्ञान होने पर पता चला यह तो मात्र मृग मारीचिका थी। जिस प्रकार गर्मी के मौसम में हिरण पानी की तलास में यत्र-तत्र भटकता है सूखी

नदियों की ओर जाता है। चमकती हुई बालू उसे दूर-दूर तक दिखती है जिससे उसे ऐसा लगता है कि यहाँ पानी मिलेगा, दौड़कर के वहाँ से भी आगे चमकती हुई बालू उसे पानी की तरह प्रतिभाषित होती है और वहाँ दौड़कर जब जाता है तो वहाँ भी पानी नहीं मिलता। अंत में वह थक जाता है गर्मी से कण्ठ भी इतना सूख जाता है कि उसमें एक भी कदम चलने की हिम्मत नहीं रहती। वह आगे बढ़ने का प्रयास तो करता है लेकिन वहीं गिर जाता है। चारों ओर से चलने वाली गर्म-गर्म लपटे उसकी हालत को और भी खराब कर देती हैं तड़फते-तड़फते वह अपनी दम तोड़ देता है। ठीक इसी प्रकार संसारी प्राणी की स्थिति है वे ऐसा ही मानते हैं कि संसार में मुझे सुख-शांति मिलेगी इसीलिए वह तरह-तरह की साधन सामग्री जुटाते हैं किसी में तो सुख मिलेगा लेकिन अंत मैं उसे महशूस होता है कि कहीं भी सुख नहीं है अपितु हर वस्तु दुख का ही कारण है। गर्मी के मौसम में जो पंखा, कूलर, ए.सी. लोगों को अच्छे लगते है। उसके चलने से शांति का अनुभव होता है लेकिन वहीं कूलर, पंखा, ए.सी. यदि सर्दी के मौसम में चला दिया जाये तो व्यक्ति को दुखदाई लगता है उस समय एक क्षण भी उसे सहन हीं करता उसके चलने में व्यक्ति कष्ट, तकलीफ महशूस करता है। कितना हमारा छोटा सोच था जिसे हम कभी सुख मानते हैं वही दुख का कारण बन जाता है और सत्य भी यही है लेकिन हम उसे समझ नहीं पाते हैं। राग की भूमिका में जो वस्तु अच्छी लगती है, वैराग्य की भूमिका में वहीं बुरी लगने लगती है।

मान लीजिए किसी को पेड़ा बहुत अच्छा लगता है, एक-एक पेड़े के िलए वह तरस जाता है यदि उसे एक पेड़ा मिलता है तो बहुत खुशी होती है इसका मतलब है दो पेड़ा मिलने पर खुशी दूनी और चार, आठ, सोलह पेड़ा मिलने पर खुशी चार, आठ और सोलह गुनी अधिक होना चाहिए थी लेकिन तब तक तो मालूम चलता है खुशी नहीं, दुख बढ़ गया तकलीफ बढ़ गई। व्यक्ति बीमार हो जाता है उल्टी अथवा दस्त होने लगते हैं और अंत में वह कहता है बस-बस अब नहीं चाहिए, क्या हुआ, जिसके लिए तुम तरस रहे थे अब मना कर रहे हो जिसे पाकर खुश होते थे उसी में आज दुख का वेदन कर रहे हो क्योंकि ज्यादा खा लिये। ध्यान रखो ज्यादा में कष्ट है तो एक में भी कष्ट था। एक पेड़ा में भी तकलीफ थी यह बात अलग है वह कम रूप में होने से हमें महशूस नहीं हुई और हम उस दुख को भी सुख समझते रहे यही तो हमारी भूल है।

ऐसी ही संसार की हर वस्तु है लेकिन हम उस दिशा में सोचते ही नहीं है उस ओर विचार ही नहीं करते, आज की घड़ी धन्य है कि आज ध्यान की इस बेला में हमें कम से कम कुछ सोचने का अवसर तो मिला। मनुष्य भव एक अवसर है हम इस पर्याय में जितना सोच सकते हैं उतना अन्य पर्यायों में नहीं सोच सकते। अनंतो भव इस संसार में हमारे व्यतीत हो गये लेकिन अभी तक ध्यान की ओर लक्ष्य ही नहीं गया, ध्यान सीखने, सुनने, समझने का अवसर ही नहीं मिला। ध्यान कब कैसे करना चाहिए इस ओर उपयोग ही नहीं गया। आज बड़ा आनंद आ रहा है, खुशी हो रही है। इस पर्याय में कहीं न कहीं तो हमारी सत्ता में पुण्य है कुछ न कुछ अच्छा किया था तभी तो अंनतानंत महापुरुषों ने जिसे आत्म ध्यान के बल से मोक्ष को प्राप्त किया है उस ध्यान को करने का अवसर मुझे प्राप्त हो सका है। हम भी ध्यान कर अपनी आत्मा के गुणों को प्राप्त करेंगे। प्रारंभ दशा का यह ध्यान अभ्यास रत रहने से एक दिन ध्यानालीन महायोगियों की तरह ही एकाग्रता प्रदान करेगा। अभी इस ध्यान में बुद्धि पूर्वक सभी आकुलता, व्याकुलताओं को छोड़ने का प्रयास किया जाता है क्योंकि आकुलता में सामायिक नहीं हो सकती मन भी नहीं लगेगा, आनंद भी नहीं आयेगा इसलिए आकुलता को छोड़कर त्याग किया जाता है। निश्चित समय तक मौन पूर्वक मन, वचन, काय को कट्रोल में रखा जाता है। अरहंत, सिद्ध की वंदना की जाती है। सिद्ध भगवान लोक के अग्रभाग पर स्थित होते हैं उनकी वंदना करते हैं। नव देवता को नमस्कार कर अकृतिम चैत्यालयों की वंदना करते हैं। आत्म विशुद्धि आत्म उत्थान का माध्यम यह सामायिक ही है। तनाव मुक्ति का प्रबल साधन सामायिक ही है।

अन्य योगाओं से जैन योगा अत्यंत महत्त्वपूर्ण है जिसे दुनियाँ योगा कहती है हम उसे सामायिक कहते हैं। ध्यान कहते हैं। बौद्ध लोग इसे विपशना कहते हैं, श्वेताम्बर संप्रदायें में प्रेक्षा कहते हैं कोई इसे समाधि, योग कहते हैं जैन धर्म में इसे सामायिक या ध्यान कहते हैं।

जब परिणाम निर्मल होते हैं विशुद्धि बढ़ती है तो आनंद का प्रतिशत भी बढ़ जाता है लेकिन परिणामों की निर्मलता के लिए हमें सम्यक् पुरुषार्थ करना पड़ता है निर्धारित समय तक हम सामायिक करते हैं उतने समय तक सारे कार्यों से विमुख हो जाना पड़ता है। मूर्ति की तरह स्थिर होना पड़ता है तब कहीं आनंद का स्रोत प्रस्फुटित होता है। आत्म ध्यान करने वाले साधक लम्बे-लम्बे समय तक इस आनंद में लीन रहते हैं भगवान आदिनाथ स्वामी ने ६ माह तक ध्यान किया था बाहुवली भगवान ने तो रिकॉड ही तोड़ दिया एक वर्ष तक वे ध्यान में निमग्न रहे। यद्यपि ध्यान के दो भेद होते हैं सविकल्प और निर्विकल्प निर्विकल्प ध्यान करने वाले तो अन्तर्मुहूर्त में मोक्ष को प्राप्त कर लेते हैं लेकिन सविकल्प ध्यान काफी समय तक चलता रहता है। इसमें बुद्धि पूर्वक पंच परमेष्ठी का चिंतन, भक्ति, स्तुति की जाती है छद्मस्थ प्राणी प्रारंभ में इसी ध्यान को करते हैं और धीरे-धीरे अभ्यस्त होकर वे साक्षात् मोक्ष का साधन स्वरूप निर्विकल्प ध्यान तक पहुंच जाते हैं और ध्यान के बल से कर्मों को नष्ट कर सिद्ध परमात्मा पने को प्राप्त हो जाते हैं।

ओ ऽ ऽ ऽ म्, ओ ऽ ऽ ऽ म्, ओ ऽ ऽ ऽ म्

❖❖❖❖❖

शोक व धनहीन होने का कारण

ग्रंथ-भावत्रयफलप्रदर्शी - आचार्यश्री कुन्थुसागर जी महाराज, विरचित

पापोदयान्मे वद देव कस्मास्त्।
प्राप्नोति शोकं सततं व्यथादम्।।

अर्थ- हे देव! आप कृपाकर मुझे यह बतलाइये कि यह संसारी जीव किस पापकर्म के उदय से सदाकाल दु:ख देनेवाले शोक को प्राप्त होता रहता है।

शोकेन दग्धान् मनुजान विलोक्य,
वा द्वेषबुध्या परिपीऽयित्वा।
उत्पाद्य बैरं छदि यश्च तुष्येत,
प्राप्नोति शोकं मनुजः स पश्चात्।। ३।।

अर्थ- जो मनुष्य शोक से दग्ध हुए मनुष्यों को देखकर संतुष्ट होता है अथवा जो मनुष्य किसी द्वेष बुद्धि से अन्य जीवों को दुख देता है अथवा जो मनुष्य अपने हृदय में किसी के साथ बैर विरोध कर संतुष्ट होता है वह मनुष्य इन कार्यो के करने के अनंतर अथवा मरने के अनंतर शोक को प्राप्त होता है।

कर्मोदयाद्वेव धनेन हीनः।
कस्मात्प्रभोऽयं भवतीह जीवः।।

अर्थ- हे देव! हे प्रभो! यह संसारी जीव किस कर्म के उदय से व कैसे काम करने से धनहीन होता हैं।

व्ययं सुपात्रे न धनस्य कृत्वा,
हठाद्धनं यश्च परस्य हत्वा।
तुष्येत्परं वा कृपणं च दृष्ट्वा,
हीनो धनैश्चान्यभवे भवेत्सा।। ४।।

अर्थ- जो पुरुष सुपात्रों के लिए अपना धर्म खर्च नहीं करते अथवा जो पुरुष बलपूर्वक दूसरों के धनको हरण कर लेते हैं, अथवा जो पुरुष अन्य कृपणों को देखकर संतुष्ट होते हैं, ऐसे पुरुष दूसरे भव में धनहीन होते हैं।

प.पू. गणा.श्री विरागसागर जी महराज के २८वें आचार्य पदारोहण पर भक्तों का हृदयाभिनंदन-

अनन्य उपकारी हैं

श्रमणाचार्य सुबलसागर जी महाराज

महान् पुरुष महानेताओं के खजाने होते हैं उनकी प्रत्येक क्रिया, प्रक्रिया में महानता के दर्शन होते हैं। वह महानता भी बनावटी नहीं सहज उत्पन्न होती है। परम पूज्य राष्ट्रसंत गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर जी महाराज एक ऐसे ही महान संत हैं। जिनकी महानता दर्शन मात्र से भक्त हृदय में समावेश हो जाती है। यद्यपि मैं बचपन से उनकी छाया में पला हूँ। मेरे अंतरंग में धर्म का हरेक संस्कार आप श्री का ही बोया हुआ है वही संस्कार आज फलीभूत हुआ है। आप समाज देश-नगर के साथ हम जैसे श्रमणों के भी अनन्य उपकारी हैं। मेरा बड़ा सौभाग्य रहा कि मुझे यह बेलगछिया का चातुर्मास आपके सान्निध्य में करने का अवसर प्राप्त हुआ है। निश्चित ही इस चातुर्मास का प्रत्येक फल मेरे लिए अनमोल शिक्षा देकर गया है जो जीवंत पर्यन्त मुझे साहस व संबल देगी। पूज्य गणाचार्य श्री का यह आचार्यपदारोहण अपने आप में सार्थक हैं इस अवसर पर हम अपने हृदय से लाखों शुभकामनाएँ देते हैं।

व्यक्तित्व का परिचायक

श्रमण मुनि सुपार्श्वसागर जी महाराज

परम पूज्य राष्ट्रसंत गणाचार्य श्री विरागसागर जी महाराज को विशेष रूप से तब जाना जबकि उदगाँव कुंजवन में परम पूज्य तपस्वी सम्राट आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के साथ उनका चातुर्मास हुआ था। विशाल संघ नायक एवं गणाचार्य होने पर भी उस वक्त आपकी लघुता उद्‌भुत थी। हर कार्य आचार्यश्री से पूछकर करना विश्वास का महत्वपूर्ण सूत्र था। मैं तो छोटा सा साधक हूँ अत: ज्यादा क्या कहूँ उस समय गुरुदेव सन्मतिसागर जी महाराज की दृष्टि में जो आपका सम्मान था वही आपके व्यक्तित्व का परिचायक था अपने ही पाटे पर बिठाना, अपने हाथ से गंधोदक लगाना, अपने साथ ही आहार के लिए ले जाना, अपना कमण्डल आदि कार्य सहज रूप से आपको देना आदि कुछ ऐसे पॉइन्ट थे जो लाखों प्रयत्न करने पर भी साधकों को प्राप्त नहीं होते थे। वे आपको सहजता से प्राप्त थे।

जिस शिष्य का गुरु स्वयं सम्मान करें तो फिर उसकी प्रज्ञा का अंजाद ही अलग होता है। आप ऐसे ही महान संत हैं इस वर्ष आपके सान्निध्य में हमें जो चातुर्मास करने का अवसर मिला यह हमारा ही महान पुण्य था आगे भी हमें सान्निध्य देते रहे ऐसी प्रार्थना के साथ आपके आचार्य पदारोहण पर बारम्बार त्रयभक्ति पूर्वक नमोस्तु-३।

हँसते रहो हँसाने के लिए

1. **चंदा**- मैं घर की छत पर मिलूँगी तुम आओगे।
   रानी- नहीं, अपने घर की छत से तुम्हें देख लूँगी।
२. **छात्र**- मुझे लिखना नहीं आता क्या करूँ?
   सर - पढ़ा करो।
३. **भिखारी** - ४ दिन से भूखा हूँ। कुछ दे दो।
   सेठ - मैं ८ दिन से भूखा हूँ। तुझे क्या दूँ।
   भिखारी - आप क्यों भूखें हो?
   सेठ - डाईटिंग पर हूँ।
४. **महिला** - ५००/- की साड़ी दिला दो।
   पति- ठीक है, पर फिर कोई माँग न करना।
   महिला- माँग भरी है तो माँग भरना ही पड़ेगी।

संकलन- कु. अंजलि जैन, कोलकाता

कठोर अनुशासन में भी वात्सल्य समाविष्ट

श्रमण मुनि विश्वविदसागर जी

समता के सागर, वात्सल्य रत्नाकर एवं कठोर अनुशासक इन तीन शब्दों को मुख से उच्चारित करने मात्र से जनमानस के हृदयपटल में प.पू. गुरुवर गणाचार्य भगवन् १०८ विरागसागर जी महाराज का मुखकमल स्वयमेव अंकित हो जाता है। यद्यपि पू. गुरुवर सरलता की मूर्ति हैं किंतु जब अनुशासन की बारी आती है तो पू. गुरुवर उतने ही अनुशासन (कठोर) हो जाते हैं किंतु हम सभी जानते हैं कि उस कठोर अनुशासन में भी पू. गुरुवर का वात्सल्य ही समाविष्ट रहता है क्योंकि जहाँ वात्सल्य है वहाँ कभी प्रेम भी मिलता है तो कभी डांट, वह इसलिये कि शिष्य कभी भटके न।

किन्हीं शिष्यों से गलती होने पर जब पू. गुरुवर उन्हें डांटते हैं तो पू. गुरुवर के चेहरे में एकदम सहजता रहती है अर्थात् चेहरे में किसी प्रकार का रोश-तोष नहीं झलकता जिससे ऐसा लगता है मानो उनके मन में उस शिष्य के प्रति किंचित क्रोध नहीं है बस जो गुरुवर बोल रहे हैं वह केवल शिष्य की गलती को दूर करने के लिए बोल रहे हैं।

एक ऐसा ही प्रसंग तब का जब पू. गुरुवर ससंघ ग्वालियर (म.प्र.) में विराजमान थे एक दिन प्रातः काल जब सारा संघ गुरु चरण सान्निध्य में उपस्थित था तब एक महाराज ने पू. गुरुवर से शिकायत की कि- आचार्य श्री पूजा करने के उपरांत सभी संघस्थ ब्र. भैया-दीदी जलपान आदि के लिये जाते हैं और स्वाध्याय प्रारंभ होने के उपरांत ही आते हैं इतने सारे भैया-दीदी जब किसी चौके में जाते होंगे तो निश्चित है कि चौके वालों को भी असुविधा होती होगी। तब पू.गुरुवर मुस्कुराकर बोले- अच्छा! तो क्या सुबह से भूख लग आती है। कौन-कौन भैया दीदी जाते हैं? पू. गुरुवर के पूछने पर जो जो भी जाते थे उन्होंने सहज ही स्वीकार कर लिया।

गुरुवर ने सुनते ही कहा- कल से सभी का जाना बंद। उपरांत वात्सल्यमयी शब्दों में समझाते हुये कहा- देखिये! आप सभी मोक्षमार्गी हैं और यदि अभी से अभ्यास नहीं बनाया तो आगे चलकर आपको ही परेशानी होगी तथा आप लोगों के कारण चौके वालों की व्यवस्था भी डिस्टर्व होती होगी। इस प्रकार उस दिन से सभी भैया दीदीयों का जलपान आदि बंद हो गया।

जब कुछ महिनों उपरांत दिल्ली ललाकिले में उन सभी की दीक्षा के उपरांत अंतराय/उपवास की श्रृंखला प्रारंभ हुई तब पू. गुरुवर मुस्कुराकर पूछते- क्यों कैसा लग रहा है। तब सभी एक ही बात कहते कि गुरुवर यदि आपने हम लोगों को अभ्यास न कराया होता तो शायद आज हम इन परीषहों को सहन नहीं कर पाते किंतु पूर्व अभ्यासी होने के कारण तथा आपके आशीष के प्रभाव से अब अंतरायादि भी सहज लगने लगे हैं उनकी ऐसी बातें सुन पू. गुरुवर एवं सारा संघ गदगद् हो उठा।

यह है पू. गुरुवर का वात्सल्य जो शुरुआत में बुरा लगने पर भी उपरांत सफलताएँ प्राप्त कराता है।

देवदर्शन

बिना कुछ खाये-पीये देव-दर्शन करना

१. खा-पीकर प्रभु दर्शन-पूजन करने का अर्थ है, कि हमें जितना प्रिय भोजन है उतने प्रिय अपने परमात्मा नहीं है।
२. भोजन करके भजन करने में तंद्रा सताती है।
३. भोजन करके भजन नहीं किंतु भजन करके भोजन करने से भूख अच्छी लगती है।
४. प्रभु भक्ति पूर्वक किये हुये भोजन का स्वाद कुछ और ही होता है।
५. सज्जन पुरुष अतिथि को भोजन कराके ही भोजन करते हैं।
६. अच्छे व्यक्ति भगवान से प्रार्थना करते हैं कि हे भगवन् संसार में कोई भी भूखा न रहे।

पात्र स्नेही : पथरिया के पूत

श्रमण मुनि सुव्रतसागर जी

इस भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड में अनन्तकाल से सम्प्रति काल तक अनन्तानंत तीर्थंकर भगवत हो चुके हैं। अधुना आद्य तीर्थंकरक ऋषभदेव एंव अन्त्य तीर्थंकर वर्द्धमान महावीर स्वामी हुए, तदोपरांत इसी अमल-विमल, विशुद्ध-शुद्ध श्रमण संस्कृति में अनेकानेक वीतरागी सन्यासी आचार्य भगवन्त हुए तदोपरांत इसी अदूषित, पूत परम्परा में आद्याचार्य आदिसागर जी 'अंकलीकर', आचार्य शांतिसागर जी 'दक्षिण' एवं आचार्य शांतिसागर जी 'छाणी' हुए हैं जिनके शिष्य, प्रतिशिष्य, प्रत्प्रतिशिष्य हाल-फिलहाल धर्म-ज्योति को अपने ज्ञान-ध्यान-तपाराधना से दिग्दिगतं में ज्योतिर्मय, ज्योतित कर रहे हैं।

गुरु परम्परा- परम तपस्वी आद्याचार्य भगवत् श्री आदिसागर जी 'अंकलीकर' जी महाराज की सु-संस्कृत, शुभंकर, वरेण्य श्रृंखला में बहुभाषी, निमित्तज्ञानी आचार्य भगवन् महावीरकीर्ति जी, वात्सल्य-रत्नाकर भविष्यदृष्टा आचार्य भगवन् विमलसागर जी, मासोपवासी आचार्य भगवन् सन्मतिसागर जी इनके सु-शिष्य, आत्मानुशासक, पात्र स्नेही गणाचार्य विरागसागर जी महाराज हैं।

दिगम्बरत्व के अग्रदूत- इक्कीसवी सदी के एक दूरदृष्टा, दिव्य प्रेरणा-पुञ्ज व्यक्तित्वका नाम है गणाचार्य विरागसागर जी महाराज। आप तीर्थंकरों की धरती पर सुप्त जीवन मूल्यों और अहिंसा का दिव्य अवदान देने दिगम्बरत्व के अग्रदूत बनकर वसुधा पर विचरण कर रहे हैं। आप दिव्य-दृष्टि सम्पन्न, दूर-दृष्य, महाप्रज्ञावन्त महाचार्य एवं नैतिक, धार्मिकता में आस्था रखने वाले लाखों भव्यों की आस्था के अधिष्ठान हैं।

जनप्रिय महासंत- सत्य की साधना, आगम की आराधना, श्रुति अनुसार आचरण, गुरु-परम्परानुसार चारित्र-चलन में लवलीन आप एक तेजस्वी, तपस्वी संत है या कहूँ संतों को गढ़ने वाले महासंत है। व्यापक दृष्टिकोण, उदारमनः, अनुभवी, नीति-निपुन, परोपकारी, अध्ययनशील, पंचाचार परायण, वात्सल्यमयी अभिरूचियों से सम्पन्न आप जनप्रिय आचार्य हैं, जिनके रोम-रोम में रचा पचा है स्नेह-अनुकम्पा एवं वात्सल्य.....।

आकर्षक व्यक्तित्व- गणाचार्य श्री विरागसागर जी महाराज ऐसे साधक है जिन्होंने अपनी जीवन शैली, तप-साधना, लेखन कला, आगमोक्त आध्यात्मिक अभिरूचियों एवं प्रवृत्तियों से सम्पूर्ण २१वीं सदी को आलोकिंत कर दीप्ति प्रदान की है। जिन्होंने अपनेक तपःपूत पाद-पल्लवों से अर्द्ध भारत को स्पर्शित किया है। जो स्वयं के सथ सम्पूर्ण जीवात्माओं के कल्याण के हितार्थ चर्या और चर्चा करते हैं। आपकी दिव्य चेतना, दिव्य विचारधारा जन-जन को आकर्षित कर रही है।

दिव्य पथ-प्रदर्शक- आपके श्रीमुख से आगम का अमृत टपकता है। आपका ज्ञान दिव्य है, प्रेरक है तथा भव्यों को सद्बोध प्रदान करने वाला कल्याणकारक है। जो हमें क्षण-क्षण, प्रतिपल शांतिपथ की और प्रेरित करता है। जिनका निर्मल चारित्र वैरागियों को दिव्य पथ-प्रदर्शक बनकर मोक्षमार्ग की ओर अग्रसर कर रहा है।

श्रेष्ठ साहित्यकार- आपकी मातृभाषा हिन्दी है, पर फिर भी बहुभाषी हैं और संस्कृत, प्राकृत में शास्त्र सृजन करने वाले श्रेष्ठ साहित्यकार। आपकी शताधिक कृतियाँ विविध विषयों एवं आपके बेजोड़, तार्किक सम्यग्ज्ञान से रू-ब-रू कराती है। आपका व्यक्ति जितना विशद् है, उससे कही विराट है आपका कृतित्व।

रत्नो के रत्नाकर- आप साहित्य सजक तो हैं ही, अपितु साथ ही साथ अनेक साहित्यकार श्रमण श्रमणाचार्यों के दीक्षागुरु भी हैं और आर्यिकाओं के गणधर। आप श्रेष्ठ शिष्यों को गढ़ने वाले शिल्पकार है। आपकी शिष्य सम्पदा में आध्यात्मिक प्रवचनों के सफल प्रस्तोता आचार्य विशुद्धसागर, सारस्वत श्रमण कविरत्न आचार्य विभवसागर जी, कवि हृदय आचार्य विनम्रसागर जी जैसे अनेक रत्न सुशोभित होते हैं। आपके द्वारा दीक्षित, पिच्छीधारी शिष्य-शिष्याओं की संख्या दो शतक है।

धरती पर : धर्म के देवता- धरती के चलते-फिरते चेतन निर्ग्रन्थ देवताओं में एक मान्य एवं विश्व-विख्यात नाम है- गणाचार्य श्री विरागसागर जी का। सम्प्रति आप धर्म क्रांति के प्रखर पुरोधा हैं। आप उपदेश के साथ-साथ अपनी श्रमण चर्या के प्रयोग से भी धर्म का संदेश देते हैं। पोथी और पंथों के दायरे से परे अभिनव प्रयोग्यता और धर्म के दिवाकर हैं जो

मानवता एवं मनुष्यता के स्तंभ पर प्रतिष्ठ है। शाकाहार के प्रबल पक्षधर, अहिंसक धर्म को जन-जन तक संप्रेषित करने वाले वीतरागी गुरु हैं।

वीतरागी वैज्ञानिक- अशिक्षा, रूढ़ियों, अंधाधुध अंधविश्वासपूर्ण परम्पराओं से परे एक दिव्य वैज्ञानिक पक्ष से धर्मपक्ष को स्थापित करने वाले, नारी शिक्षा, नारी से नारायण तक की दिव्य-यात्रा को सुझाने वाले वीतराग वैज्ञानिक हैं, जो चेतन रसायण का अन्वेषण एवं प्रयोग करते हैं। आप साहित्य विधा के डॉक्टर भी है। अनुकंपा, दया, करूणा के विपुल भण्डार हैं। आर्ष परम्परा के पोषक एवं चतुर्विध संघ के सफल संचालक है। आत्मा के अन्वेषक हैं, इसीलिए आप चेतन सरोवर में डुबकी लगाकर आत्मिक गुणों की खोजकर, उन्हें श्रमण चर्चा में प्रयोग करते हैं। आप कर्मकलंक रूपी दोषों से दूर करने वाले, जन्म-जरा-मृत्यु जैसे रोगों को दूर करने वाले परम वैद्य हैं। विद्वान, मनीषियों के शब्दों में कहूँ तो आप अनुशासन प्रिय, चलते-फिरते विश्वविद्यालय हैं।

बालयोगी : आत्मिक भोगी- गणाचार्य श्री बाल ब्रह्मचारी हैं। आपने १६ वर्ष के अल्पायु में वैराग्य-पथ स्वीकार किया। कई भवों की निर्मल विशुद्ध भावना का प्रतिफल है कि- कोई दिगम्बर बाल योगी बनकर आत्म साधना करे। गणाचार्य श्री बालयोगी के साथ आत्म गुणों का भोग करने वाले आत्मिक भोगी हैं।

पात्र स्नेही : श्री गुरु -

रत्नत्रयविशुद्धः सन् पात्रस्नेही परार्थकृत।
परिपालितधर्मो हि भवाब्धेस्तारको गुरुः।।

जो रत्नत्रय से विशुद्ध हों, धर्म-धर्मात्मा के प्रति स्नेह रखने वाले हों, सज्जन हो, योग्य शिष्यों पर प्रेम करने वाले, परोपकारी, धर्मपालक, संसार-समुद्र से पार लगाने वाले ही उत्तम गुरु हैं।

गणाचार्य श्री विरागसागर जी महाराज पात्रों पर स्नेह रखने वाले, उन्हें दीक्षा-शिक्षा देने वाले साधक हैं। आपकी यह आंतरिक अनुकंपा, करूणा है कि- आप वृद्धों को दीक्षा देकर उनके संयम पथ को प्रशस्त करते हैं। नर हो या नारी, होना चाहिए वैरागी, ऐसे वैरागियों पर अतीव अनुकंपा करने वाले हैं, पात्र स्नेही श्री गुरुदेव।

आगमानुसार आचार्य का स्वरूप -

पंचाचारतो नित्यं मूलाचार विदग्रणीः।
चातुर्वर्ण्यस्य संघस्याययःस आचार्य इष्यते।।

श्री इन्द्रनन्दिसूरि ने ग्रंथराज नीतिसारसमुच्चय में उद्धृत किया है कि- जो नित्य पंचाचार को पालन करने में रत हैं, मूलाचार अर्थात् अट्ठाईस मूलगुणों के ज्ञाता हैं तथा चतुर्वर्ण (संघ) के अग्रणी, प्रधान हैं, वह आचार्य हैं।

संग्रहानुग्रह प्रौढ़ो, रूढः श्रुत चरित्रयोः।
यः पंचविधि माचार, माचारयति योगिनः।
बहिः क्ष्िप्तमलः सत्वगांभीर्याति प्रसादवान्।
गुणरत्नाकरः सोऽयमाचार्योऽवार्य धैर्यवान्।।

सिद्धांतचक्रवर्ती आचार्य भगवन् वीरनन्दी जी ने ग्रंथरत्न आचारसार में लिखा है कि- जो संग्रह और अनुग्रह करने में प्रौढ़ हैं, श्रुत और चारित्र में आरूढ़ हैं, योगियों को पाँच प्रकार के आचार का आचरण कराते हैं, जिनके व्रतादि में अतिचार न हों, सत्व गांभीर्य और अत्यन्त प्रसन्नता से युक्त, धैर्यवान गुणों के समुद्र हैं, वह आचार्य परमेष्ठी हैं।

सुख के दाता : गुरु -

गुरुं बिना न कोऽप्यस्ति भव्यानां भवतारकः।
मोक्षमार्ग प्रणेता च सेव्योऽतः श्रीगुरुः सताम्।।
गुरु सेवाविधातव्या मनोवाञ्छितसिद्धये।
संशयध्वान्तनाशार्थ मिहामुत्र सुखाय च।।

संसार-सागर में डूबते जीवों को कोई सहारा है, मोक्षमार्ग में कोई लगाने वाला है तो वह मात्र गुरु है, इसलिए

कल्याणार्थी, भव्य मुमुक्षु जीवों को मनोवाञ्छित कार्य अर्थात् निर्वाण की सिद्धि के लिए, संशयरूपी तम को हरने के लिए तथा इहलोक, परलोकिक सुख के लिए गुरु को सेवा करनी चाहिए।

वैभवं विनयो विद्या विवेको विमलं यशः।
मति भूत्यादयोऽन्येऽपि भवन्ति गुरु भक्तिनः।

गुरु भक्ति से वैभव, विनय, विद्या, विवेक, निर्मलयश और बुद्धि-सम्पत्ति आदि अन्य पदार्थ भी प्राप्त होते हैं।

साधुनां दर्शनं पुण्यं, तीर्थभूताहि साधवः।
कालेन फलते तीर्थं, सद्यः साधु समागमः।।

साधुओं के दर्शन से ही पुण्यबंध होता है, साधु तीर्थरूप हैं, तीर्थ वन्दना करने का फल तो समय आने पर फलदायी होता है, किन्तु साधु दर्शन का फल तो तुरन्त ही मिल जाता है।

उपरोक्त अनेकानेक गुणों से सम्पन्न आचार्य श्री विरागसागर जी हैं, जिन्होंने आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए ढाई दशक पूर्ण कर लिए हैं। आपका जन्म श्री सिद्धक्षेत्र कुण्डलपुर के समीप मध्य प्रदेश के पवित्र गांव पथरिया में २ मई १९६३ पिता श्री कपूर चंद जी एवं मातु श्रीमती श्यामा देवी की कुक्षि से हुआ था। २० फरवरी १९८० में क्षुल्लक दीक्षा, ९ दिसम्बर १९८३ को मुनि दीक्षा एवं ८ नवम्बर १९९२ को आचार्य पद अंगीकार किया। आपके क्षुल्लक दीक्षा गुरु मासोपवासी आचार्य श्री सन्मतिसागर जी एवं मुनि दीक्षा प्रदाता वात्सल्य रत्नाकर आचार्य भगवन् विमल सागर जी हैं।

विश्व वंद्यनीय, प्रभावना-प्रभाकर, तीर्थोद्धारक, आर्ष परम्परापोषक, आगमोक्त चर्यापालक, अनुकम्पा-करूणा के आलय, जन-जन के उद्धारक, महामुनीन्द्र, मुनिनाथ, पात्र स्नेही परम् पूज्य गणाचार्य १०८ श्री विरागसागर जी को अन्तरंग आस्था से, सविनय, सश्रद्धा, सभक्ति योग पूर्वक कोटिशः नमोऽस्तु...। उनकी गुरु परम्परा को प्रणाम....।

सर्वेषां मंगलम् भवतु, वर्द्धताम् जिनशासनम्।

गुरुचरणाम्बुज-चंचरीक कश्चिदल्पज्ञ श्रमणः
(संघस्थ : श्रमणाचार्य श्री विशुद्धसागर जी महाराज)

विरागामृत

(१५.१०.२०१९ वेलगछिया कलकता)

१. अरिहंत परमेष्टी ही सच्चे देव होते हैं।
२. सच्चे देव १८ दोषों से रहित, वीतरागी, सर्वज्ञ और हितोपदेशी होते हैं।
३. देवगति के देवों में सम्यकदृष्टि है तो चौथे गुणस्थानवर्ती होते है, रागद्वेष परिग्रह सहित होते हैं उन्हें सच्चे देव नहीं कहा जा सकता है।
४. सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्र को धर्मेश्वरों ने धर्म कहा है। इसके विपरीत जो है वह धर्म नहीं है।
५. जो हिंसादि पापों से युक्त हैं वह धर्म नहीं है। उसे धर्म मानना अज्ञानता या मूढता है।
६. साधुजन कर्मोदय में कष्टों से घबराते नहीं है समता रखते हैं। जो विचलित होते हैं संक्लेषित होते है उनके लिये मोक्ष का द्वार बन्द ही रहता है।
७. मोक्ष द्रव्य और भाव से रत्नत्रय की साधना से ही खुलता है। सहष्णुता सहनशीलता प्रत्येक साधक में होना चाहिए। वह आत्म विशुद्धि के साथ होना चाहिये।
८. जीवन मरण लाभ अलाभ संयोग वियोग में शत्रु मित्र सुख दुख में जो समता भाव रखते हैं कर्त्तव्य का पालन करना कर्त्तव्य निष्ठ ही करते हैं।
९. अपने बड़े साधकों की अविनय करने अपशबद कहने, अवज्ञाकरने से कर्म का बन्ध ही होता है। जिससे दुःख ही प्राप्त होता है।

ध्यान मूलं गुरु मूर्ति

प्रात: स्मरणीय, त्रिकाल वंदनीय, विद्यावारधि, बुन्देलखण्ड के प्रथमाचार्य राष्ट्रगौरव, विशाल संघ के उन्नायक, माँ जिनवाणी के भण्डार पंचाचार परायण, सिस्साणुग्गह कुशल, वात्सल्य मूर्ति, समताशिरोमणि, युग प्रतिक्रमण प्रवर्तक, धर्म प्रभावक, धर्माचार्य, संहिंतासूरि, उपसर्ग विजेता, जन-जन के प्रिये महान संत परम पूज्य गणाचार्य गुरुवर १०८ श्री विरागसागर जी महामुनिराज के पावन चरणों में त्रय भक्ति पूर्वक नमोऽस्तु- नमोऽस्तु-नमोऽस्तु।

किसी ने सच ही लिखा है-

गुरु की महिमा अगम है, कोई न पावे पार।
मैं मति अल्प अज्ञान हूँ, कौन करे विस्तार।।

गुरुवर की महिमा अपार है उनके ज्ञान गुण का भण्डार विशाल है मेरी क्या सामर्थ कि उनके गुणों को गा सकूँ फिर भी उनका आशीष है और यह हमारे लिये प्रसन्नता का विषय है कि मुझे अपने गुरुवर को २५वाँ राष्ट्रीय रजत आचार्य पदारोहण महोत्सव मनाने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है, ऐसे पूज्य गुरुवर के चरणों में मैं अपनी भावाञ्जलि व्यक्त करता हुआ भावना भाता हूँ कि हे गुरुवर ! आपने इतनी कम उम्र में अनेकों उपसर्गों का समता, धैर्यता के साथ सामना करते हुए अपने प्रकृष्ट ज्ञान ध्यान के द्वारा सूर्य की तरह इस धरा पर उदित होकर इतने विशाल शिष्यों के अज्ञान अंधकार को नष्ट कर उन्हें निज लक्ष्य मोक्षमार्ग पर लगाया और साथ-साथ अनेक भव्य प्राणियों को अपने मुखारबिन्द से माँ जिनवाणी का पान कराकर इस अनन्त संसार सागर में डूबने से बचाया ऐसे परम उपकारी मोक्ष मार्ग के पथिक-

ज्ञान ध्यान- तपलीन निरन्तर वात्सल्यमयी अभिरामी हो।
मुक्तिपथ पर चलने वाले, गुरुवर तुम शिवगामी हो।।

किसी ने सच ही लिखा है-

'गु' शब्दस्तवन्धकारे तु 'रू' तस्य निरोधकम्।
अन्धकार विनाशित्वादं 'गुरु' रित्यभिधीयते।।

गुरु अज्ञान अन्धकार को हटाकर प्रज्ञा का प्रकाश देते हैं और जीवन के पथ को अलौकित करते हैं। ऐसे गुरु की गहराई को नापना असंभव है, हाँ (उनकी) इनकी गहराई में डूबकर खुद उन जैसे गहरे हो जाना इसमें ही जीवन की सार्थकता है।

आचार्य भगवन् अमित गति स्वामी- धर्म परीक्षा में आचार्य को सूर्य की उपमा देते हुये लिखते हैं-

वचोंशु भिर्भव्य मन: सरोजं, निद्रां न यैबोर्धितमेति भूय:।
कुर्वन्तु दोषा दयनोदि नस्ते, चर्याम गह्यी मम सूरि सूर्या:।।

यहाँ आचार्य में सूर्य को अध्यारोप करते हुये बतलाया है जिस प्रकार सूर्य अपनी किरणों के द्वारा कमलों को विकसित किया करता है उसी प्रकार से आचार्य परमेष्ठी अपने वचनों से समीचीन उपदेश के द्वारा भव्य जीवों के मन को विकसित किया करते हैं। तथा सूर्य जैसे दोषोदय (रात्रि के उदय को) को नष्ट करता है वैसे ही आचार्य सूर्य भव्य प्राणियों के दोषों की उत्पत्ति को नष्ट किया करते हैं। फिर भी सूर्य की अपेक्षा आचार्य परमेष्ठी गुरुवर में यह विशेषता है कि सूर्य जिन कमलों को मात्र दिन में ही विकसित करता है वे रात्रि में मुकुलित हो जाते हैं, परन्तु गुरुवर जिन भव्य-जीवों के मन को धर्मोपदेश द्वारा प्रफुल्लित करते हैं उनका मन फिर कभी विवेक रहित नहीं होता है- वह सदा सन्मार्ग में प्रवृत्त रहता है,। उसी प्रकार आचार्य- गुरुवर आपा हम भव्य जीवों के कल्याण के साथ-साथ आप निर्बाध मोक्ष को प्राप्त करें।

श्री वादीभसिंह सूरि- क्षत्र चूड़ामणि में गुरु खेबटियाँ हैं-

'कर्णधार! भवार्णोधे-र्मध्यतो मज्जता मया।
कृच्छ्रेण वोधिनौ -र्लब्धा, भूयान्निर्वाण पारगा।।'

हे जगतारक भगवन! जैसे समुद्र में डूबता हुआ कोई मनुष्य कर्मोदय से किसी नौका को प्राप्त कर ले, किन्तु यदि खेवटिया नहीं मिले तो वह विशाल समुद्र पार नहीं कर सकता है उसी प्रकार हम संसारी जीव इस संसार समुद्र में डूब रहे थे परन्तु अब इससे पार होने के लिये मुझे रत्नत्रय रूप नौका प्राप्त हो चुकी है और आप इसे पार लगाने में चतुर खेवटिया हैं-

इसलिये कृपा कर मुझे संसार से पार लगाइये, ऐसी भावना भाता हुआ कामना करता हूँ कि हे आचार्य गुरुवर आप भी जैसे खेवटिया अन्यों को पार करता हुआ स्वयं भी अपने आप पार होता है वैसे ही आप शीघ्र ही अपने लक्ष्य निर्वाण को प्राप्त करें।

इन्ही भावना के साथ आपका शिष्य-

श्रमण मुनि संस्कार सागर

गुरु के प्रति शिष्य का समर्पण

श्रमणी आर्यिका विशिष्टश्री माता जी

'समर्पणता' गुरु-शिष्य के रिश्ते की वह डोर है जो गुरु को शिष्य से एवं शिष्य को गुरु से जोड़े रखती है शिष्य का समर्पण जितना अधिक अपने गुरु के प्रति होता है गुरु का वात्सल्य भी शिष्य के प्रति उतना ही अतिरिक्त होता है एवं जहाँ हमारे परम उपासक कठोर साधक आत्मान्वेषी धरती के चलते-फिर तीर्थ, सरलता जिनके रग में समायी हुई हैं ऐसे सौम्यता के प्रतिमूर्ति प.पू. गुरुदेव गणाचार्य भगवन् जैसे यदि गुरु हमें मिल जावें तो ऐसे सद्गुरु को जितना समर्पित करें उतना कम है।

समर्पण में कोई तर्क, वितर्क, कुतर्क नहीं होता यदि गुरु कहें २ और २, ५ होता हैं तो बिना तर्क करे स्वीकार कर लेना क्यों? क्योंकि हमारे गुरु ने यदि ऐसा कहा है तो इसमें भी कोई रहस्य होगा जैसे मिट्टी जब कुम्हार के प्रति समर्पित होती है तो वह यह नहीं सोचती कि मुझे गलना-पिटना पड़ेगा इसलिये वह एक दिन घड़ा बन पाती है और शीतल जल के द्वारा स्वयं के साथ पर को भी शीतलता प्रदान करती है ऐसे ही एक शिष्य को भी अपने आराध्य के प्रति निशंकित निकांक्षित रूप से समर्पित होना चाहिए और यदि कभी गुरु उसे कंट्रोल करें या डांटें तो उसे भी सौभाग्य मान स्वीकार करना चाहिए क्योंकि डॉट, उसमें ही लगती है जिसमें कुछ भरा हो इसी प्रकार गुरु की डांट भी उसी शिष्य के लिये ही होती है जिनमें उन्हें योग्यताएँ नजर आती हैं समर्पण एक के प्रति ही होना चाहिए अनेक के प्रति नहीं, क्योंकि यदि शिष्य अनेक गुरु बनाना चाहे तो वह किसी के प्रति भी पूर्ण रूपेण न होकर भ्रम में पड़ मार्ग से भटक जायेगा और उन्नति की जगह अवनति को प्राप्त होगा।

किन्तु जो शिष्य अपने गुरु के प्रति पूर्णरूपेण समर्पित होते हैं तो गुरु भी उसे सद्गुणों से भरकर एवं सद्मार्ग प्रसस्त करा पूर्ण बना देते हैं अधूरे समर्पण में न गुरु को वात्सल्य ही मिल पाता है और न ही उपलब्धियाँ।

गुरु अपने अनुभव एवं असीमज्ञान के द्वारा शिष्य को अच्छा बनाने का प्रयास करते हैं उसमें उनका स्वार्थ भाव नहीं अपितु प्राणीमात्र के प्रति कल्याण भाव ही छिपा होता है इसलिये शिष्य का भी यही कर्तव्य है कि वह अनुकूल-प्रतिकूल सभी परिस्थितियों में बिना तर्क-वितर्क कुतर्क एवं शर्त के गुरु आज्ञा एवं अनुशासन का गुरु के प्रत्यक्ष में एवं परोक्ष में भी पूर्ण रूपेण पालन करें।

जब गुरु नि:स्वार्थ भाव से हमें सद्मार्ग प्रसस्त कराते हैं तो क्यों न हम भी गुरु के प्रति नि:स्वार्थ पूर्वक समर्पित होकर अपनी गुरु भक्ति गुरु चरणों में प्रस्तुत करें क्योंकि नि:स्वार्थ भक्ति ही मुक्ति प्रदान करती है।

पूज्य गुरुदेव के २८ वे आचार्यपदारोहण दिवस पर बारम्बार नमोऽस्तु।

संयम की कठोर साधना

श्रमणी आर्यिका विजेताश्री माता जी

जो साधनों की दुनियाँ के मध्य भी उन कृतिम सुखकारी साधनों से निर्लिप्त अपनी आत्मसाधना में संलग्न रहते हैं। बाहिक प्रदर्शन में किंचित भी ध्यान न दे केवल आत्मदर्शन अर्थात् निरतिचार संयम की परिपालना में दत्तचित रहते हैं ऐसे निष्प्रही आत्मस्वभावी प.पू. गुरुदेव गणाचार्य भगवन् १०८ विरागसागर जी महाराज की आगम समस्त जीवन चर्या ही अपने आप में अद्वितीय है।

पू. गुरुदेव जितना प्राणी संयम के लिये सजग है वैसे ही इन्द्रीय संयम के लिये भी, इस वर्तमानकाल की मौलिकता में जहाँ आप संयमी भी इससे प्रभावित हो रहे हैं वहीं चतुर्थकालीन चर्या के धारी परमोपकारी पू. गुरुदेव इस भौतिक प्रसंगतियों से कोशों दूर अपनी निर्दोश साधना की परिपालना कर रहते हैं। यद्यपि संयम की परिपालना में पू. गुरुदेव एक आदर्श है किन्तु विस्तार की अधिकत्व न कर केवल पंचेन्द्रिय संयम की परिपालना को विस्तृत रूप से कहूगी।

स्पर्शन इन्द्रिय संयम मई-जून माह की ४५-४८डिग्री से. का तापमान जहाँ व्यक्ति को बेचैन कर देता है वहीं ऐसे भारी तापमान में भी पू. गुरुदेव न तो कभी ए.सी. आदि का प्रयोग करते हैं न ही कूलर-पंखों का इसी प्रकार कड़ाके की ठंड होने पर भी समतामर्या गुरुवर हीटर आदि का प्रयोग न कर तप में रत रहते हैं।

रसना इन्द्रिय सयंम- पूज्य गुरुदेव हर अष्टमी चर्तुदशी नीरस आहार करते है एवं अन्य दिनों में भी अन्य प्रकार की वस्तुओं का त्याग करते हैं। क्योंकि साधक का गुण ही हुआ करता है सादा भोजन उच्च विचार।

घ्राण इन्द्रिय संयम- पू. गुरुदेव का सुगंधित तेल आदि का जीवन पर्यन्त के लिये त्याग है तथा कभी रास्ते से गुजरते हुये यदि मरे हुये जीव का कलेवर पड़ा हो उसमें चाहे कितनी भी बदबू आ रही हो किन्तु पू. गुरुदेव का कभी नाक सिकोड़ते या नाक बंद करते नहीं देखा जाता।

चक्षु इन्द्रिय संयम- वस्तु का कलर आदि न परका वस्तु को परखते हैं जैसे यदि कोई संयम की दृढ़ता से परिपालना करता हैं तो वह देखने में चाहे कैसा भी हो किन्तु वह पू. गुरुदेव के लिए आदरणी एवं प्रिय होता है।

कर्ण इन्द्रिय सयंम- पू. गुरुदेव न तो कभी गानादि सुनते हैं और तो क्या यदि कोई भजन भी गानों की तर्ज मैं गाये तो उसे कहते है गानों की तर्ज में नहीं अपनी स्वयं की भिन्न तर्ज बनाकर भजन गाना चाहिए।

इस प्रकार पू. गुरुवर पचेन्द्रिय संयम के द्वारा निरंतर कर्म निर्जरा करते हुये संयम की परिपालन में रत रहते है।

संख्या में रह कर भी गुणवत्ता बढ़ायें

चलो निरंतर मोक्षमार्ग पर, साहस खूब बढ़ाना। ज्ञान-ध्यान हिलमिल कर करना, सहनशीलता लाना।।

साधकों की मोक्षमार्ग की यात्रा चल रही है, जहाँ प्राय: प्रारंभ में सभी की धारणा होती है कि हमारा संयम वृद्धिंगत हो लेकिन अनुभव से तो यह है कि प्रथम, जो हमारा संयम है, उसी में निखार लायें। यह तभी होगा जब हम स्वामुखी होंगे वा संघ साधकों से साँकेल की तरह (वास्तविकता में) जुड़े होंगे क्योंकि यह, अकेले (एकल) रहने में संभव नहीं। जब हम संघ के बीच रहते हैं तो हम एक-दूसरे की क्रियाओं में सहयोगी होते हैं, परस्पर की जो गल्तियाँ होती हैं, वो ज्ञात हो जाती हैं, और अच्छाईयाँ हैं तो प्रोत्साहन मिलता है। हम जब किसी का सहयोग उसकी प्रतिकूलता में करते हैं तो दूसरा भी जी जान से हमारी बाधकता में साधक बनता है। तब आपको मुख से कहना नहीं पड़ता। वे एक-दूसरे के पूरक होते हैं। इसलिए सेवाभाव, विचारों के आदान-प्रदान होने से संयम पूर्ण चर्या में निखार आता है, जबकि इसके विपरीत जब हम अकेले रहना पसन्द करते हैं तो ध्यान दे ! हमारी साधना में निखार तो दूर रहा, उसमें कमियाँ और शिथिलतायें बढ़ जाती हैं। कोई रोकने-टोकने, समझाने वाला नहीं होता वहाँ। केवल मनमानी। तो फिर जिनवाणी, गुरुवाणी, साधकवाणी मिले भी तो अच्छी नहीं लगती। अत: श्रेष्ठ साधना, के लिये संगठित होकर रहें, संघ बिहारी बनें। एकल स्थिति से बचें। संख्या/ संघ में रहें, गुणवत्ता बढ़ायें।

समयोचित शिक्षायें से साभार

उपसर्ग पर उत्कर्ष की यात्रा

श्रमणी आर्यिका विसंयोजनाश्री माता जी

भारत वर्ष में दिगम्बर श्रमण संतों की महनीय भूमिका है उत्कर्ष प्राप्त अनेकानेक श्रमण संतों में परम पूज्य राष्ट्रसंत गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर जी महाराज का भी महत्वपूर्ण स्थान है। पूज्य आचार्य श्री का जीवन गुलाब की तरह ही नहीं गुलाब से भी उपरितम् हैं क्योंकि गुलाब काँटों के बीच रहकर खिलता है लेकिन पूज्य गुरुदेव काँटे का प्रहार सहकर भी गुलाब की तरह खिलते हैं।

जब हम पूज्य गणाचार्य भगवंत के जीवन की ओर झांकते हैं तो हृदय कांप उठता है। इतनी कठिन दीक्षा के बाद भी अग्नि परीक्षा देना निश्चित ही असाधारण व्यक्तित्व का कार्य है। १६ वर्ष की उम्र में दीक्षा ले आचार्य श्री पहले तो बड़ी-बड़ी बीमारियों से जूझे और रोग परिसह जय का प्रमाण पत्र प्राप्त किया। उसके बाद जब उनकी रत्नत्रय की निर्मल साधना का यश दिग्दिगंत तक व्याप्त होने लगा तो अनेकों ईष्यालुओं ने योगों की वमृता से घिनौने षडयंत्र रचे किन्तु पूज्य श्री की निर्दोष चारित्र साधना की शक्ति के समक्ष वे सभी षडयंत्र सूर्य पर फैकी गई धूलि के समान निष्फल रहे।

सच है तपाये हुए शुद्ध स्वर्ण पर कितना ही कीचड़ डाला जाये उससे स्वर्ण का कुछ भी नहीं बिगड़ता अपितु और अधिक चमकता ही है। चंदन को जितना घिसा जाता है वह उतना ही महकता है। धूप अग्नि में डालने पर भी सुगंधि उत्पन्न करती है ठीक इसी तरह पूज्य गुरुवर ने जितने-जितने उपसर्ग सहे उनका व्यक्तित्व उतना ही अधिक निखरता गया और आज संपूर्ण विश्व में उपसर्ग जयी अनुशासन प्रिय, विशाल संघ नायक के रूप में उनकी गणना सर्वोपरि है।

पूज्य गुरुवर पर आने वाले उपसर्ग परिषह उनके उत्कर्ष के पहलु बन गये और पूज्य श्री उपसर्ग पर उत्कर्ष की यात्रा करते हुए और अधिक तेजस्विता के साथ अविरल गतिमान हैं लक्ष्य की ओर। पूज्य गुरुदेव के २८ वें आचार्य पदारोहण पर बारम्बर नमोस्तु-३।

प्राणायाम

श्रमणी आर्यिका पुनीत चैतन्यमतिश्री माता जी

(संघस्थ- आ. संभवसागर जी महाराज)

शीतकारी प्राणायाम- ध्यानात्मक आसन पर बैठकर जिव्हा को ऊपर तालू में लगाकर ऊपर-नीचे की दंत पंक्ति को एकदम सटाकर ओठों को खोलकर रखे। अब धीरे-धीरे सी-सी की आवाज करते हुए मुँह से श्वास लें और फेफड़ों को पूरी तरह भर लें। फिर मुँह बंदकरक नाक से धीरे-धीरे रेचक करें। पुनः इसी तरह दुवारा करें। ८-१० बार अभ्यास करें शीतल काल में अभ्यास कम करें।

लाभ- निद्रा कम होती है शरीर शीतल रहता है। योग और ध्यान हमारे जीवन की आवश्यकता है यह समझते हुए नित्य ध्यानावस्थित हो आत्मचिंतन करना चाहिए।

ब्रह्मचर्य का पालन अति आवश्यक है- गृहस्थ व्यक्ति भी साधना की इस सहज प्रक्रिया के द्वारा परम आनंद को प्राप्त कर सकता है।

पूर्ण आनंद की प्राप्ति के लिए क्षणि विषय-सुख को छोड़ना होगा।

शरीर की शुचिता एवं सात्विकता पर भी अवश्य ध्यान दें। युक्त आहार युक्त-निद्रा एवं संयमित ब्रह्मचर्य के बिना तो स्वस्थ रहना भी कठिन है। फिर योगाभ्यासी को तो आहार निद्रा तथा ब्रह्मचर्य के नियमों का पालन आवश्यक हो जाता है।

यम एवं नियमों के पालन में बिना कोई भी व्यक्ति योगी नहीं हो सकता। समाधि की स्थिति को भी पाने के लिये यम नियम का पूर्ण पालन अति आवश्यक है।

अहिंसा और सत्य आदि यम नियमों में आपको आस्था श्रद्धा एवं विश्वास इतना दृढ़ हो जायेगा। फिर किसी के प्रति हिंसा का भाव ही मन में जागृत नहीं होगा। इसलिए योग को सहज किया जाता है क्योंकि योग हमारा स्वधर्म है।

आहार सामग्री अक्षय निधि बन गई

श्रमणी आर्यिका विजिज्ञासाश्री माता जी

उड़ीसा की धरा को अपनी चरणोपांशु से पावन कर जब विमलकीर्ति प.पू. गुरुवर गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर जी महाराज जिनशासन की कीर्ति फैलाने हेतु बंगाल प्रान्त की ओर बढ़े तो बंगालवासियों की प्रसन्नता का पार न रहा और होता भी कैसे जहाँ १-२ साधुओं का सान्निध्य भी दुर्लभ है वहाँ चमत्कारी चलते फिरते तीर्थ पू. गुरुवर जैसे महासंत का अनायास ही सान्निध्य प्राप्त हो जाना उनके लिये परम सौभाग्य का विषय था। बंगाल के जिन-जिन नगरों में पू. गुरुवर ससंघ का प्रवेश होता वहाँ के लोग तो गुरु वाणी सुन तृप्त ही न होते और कुछ दिन रूकने हेतु पुनः पुनः आग्रह करते उन्हें देख ऐसा लगता मानों गुरु विराग रूपी क्षीराम्बुनिधि पाकर वर्षों की प्यास का आज शमन हो पाया है।

कुछ ऐसा ही प्रतिभाषित हो रहा था खड़गपुर नगर में, जहाँ इतने विशाल संघ का प्रथम बार पदार्पण हुआ था। गुरुभक्ति से श्रद्धालुओं की ऐसी भावना बनी कि चातुर्मास की प्रार्थना प्रारंभ हो गई, लोग तो संघ की सेवा-वैय्यावृत्ति करने हेतु ऐसे तत्पर थे जैसे कोई निर्धन अमूल्य रत्नों के मिल जाने से उसकी रक्षा व्यवस्था में तत्पर होता है। आहार के समय भी कुछ ऐसी ही प्रतीत होता इसी श्रृंखला में एक परिवार ऐसा भी था जो बाह्यिक संपत्ति से भले ही कमजोर था किन्तु आन्तरिक भावों से धनाध्य था।

जब उन्होंनेक बड़ी भक्ति के साथ चौका लगाया तो एक दिन उनके प्रबल पुण्योदय से पू.गुरुवर के पड़गाहन करने का भी सौभाग्य हुआ किन्तु उन्होंने केवल २ महाराज के आहरार्थ व्यवस्था बनाई थी और पू. गुरुवर के साथ २ महाराज का और पड़गाहन हो गया एवं पू. गुरुवर की सेवार्य २ महाराज जो प्रतिदिन आहार के समय पू. गुरुवर के साथ जाते है वे भी पहुँच गये। अब तो जहाँ पू. गुरुवर के पड़गाहन से उन्हें जितनी खुशी थी वह चिंता में परिवर्तित हो गई कि अब क्या होगा किन्तु फिर भी सोचा कि कुछ भी हो महाराज को आहार के बिना लौटने नहीं देंगे। उन्हें विश्वास था कि गुरुवर की कृपा साथ है तो सब हो जायेगा ऐसा सोचकर उन्होंने नवधाभक्ति पूर्वक आहार करना प्रारंभ किया।

उसी समय अक्षय निधि प्रदाता प.पू. गुरुवर के प्रभाव से ऐसा चमत्कार हुआ कि देखते ही देखते पू. गुरुवर सहित सभी महाराजों का निरंतराय आहार हो गया और आश्चर्यजनक बात यह थी कि उस थोड़ी सी आहार सामग्री में ५ महाराजों के आहार भी हो गये और प्रसाद रूप कुछ आहार सामग्री भी बच गई। पानी भी केवल एक चरी था जिसमें से ५ महाराजों के आहारोपरांत लगभग २ लीटर पानी बचा रहा।

यह चमत्कार साक्षात् अपनी आंखों से देख सभी पू. गुरुवर के चरणों में नतमस्तक हो गये और बाद में सारी बात बताते हुये कहा- गुरुवर आपकी महिमा है अद्भूत है आज तो हम शर्मिंदित हो रहे थे कि अब आहार कैसे होगा किंतु आपके चमत्कार से वह आहार सामग्री अक्षय निधि के रूप में परिणत हो गई तभी हम सभी की निरंतराय आहार चर्या करा पाये हैं नहीं तो आज पता नहीं क्या होता। उनकी बात सुन पू. गुरुवर ने मुस्कुराते हुये कदम आगे की ओर बढ़ा लिये।

महत्वपूर्ण जानकारी

परम पूज्य गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर ससंघ कहाँ विराजमान हैं, जानने के लिए Google अथवा किसी भी इंटरनेट Browser पर जाकर टाईप करें।

Viragsagar.trackerbox.co.in जो Location दिखाएँ उसे बड़ा करके उसके विषय में तथा आस-पास की Location के विषय में जाना जा सकता है।

प्रबन्ध सम्पादक : विरागवाणी

जीवन पर्यन्त ऋणी रहूँगा

भट्टारक लक्ष्मी सेन जी, मेलचित्तामूर

मैं जीवन में कभी मंदिर नहीं जाता था धर्म क्या है यह नहीं जानता था। आदिश्वर मंदिर मेरे घर के सामने था तो भी मैं मंदिर के दर्शन नहीं करता था किन्तु जब परम पूज्य राष्ट्रसंत गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर जी महाराज के शिष्य मुनिश्री विश्वेश सागर जी महाराज का चातुर्मास हमारे यहाँ हुआ तब मैं उनसे जुड़ा वह भी मात्र दो-चार लड़कों को साथ ले जाकर रात्रि में वैय्यावृत्ति करते थे। और जब कभी समय मिलता था तो जाकर महाराज के पास बैठते थे। महाराज श्री भी मुझ अकेले व्यक्ति को प्रवचन देकर संबोधन करते थे।

एक दिन महाराज मेरा हाथ पकड़कर मंदिर ले गये उसी दिन से मैं मंदिर जाने लगा। मैं हिन्दी समझता था मात्र इसीलिए मुझे पत्र देकर महाराज श्री ने सन् २०१४ में परम पूज्य गणाचार्य भगवन् के पास पहुंचाया उस समय आचार्य भगवन् का चातुर्मास अतिशय क्षेत्र श्रेयांसगिरि में हो रहा था। जब हम १४-१५ लोग आ.श्री के पास आये तो आ.श्री ने मुझे पिच्छि से खूब आशीर्वाद दिया। हम लोगों ने वहाँ चौका लगाया था। पहले दिन तो आ.श्री नहीं आये दूसरे दिन आ.श्री का आहार हमारे चौके में हुआ। उस दिन मैंने सभी से त्याग कराकर आहार दिलाया लेकिन स्वयं डर के कारण आहार नहीं दे रहा था। अंत में आ.भगवन् ने स्वयं संकेत कर मुझे आहार देने को प्रेरित किया। मैंने डरते-डरते आहार दिया। तभी से मेरा मन धर्म में रूचि लेने लगा और मैं मंदिर दर्शन, पूजन करने लगा। आहार दान देने लगा जिसका परिणाम यह हुआ कि आज मैंने रत्नत्रय का प्रतीक यह पिच्छी धारण कर ली।

आज मैं आपके सामने भट्टाकर बनकर खड़ा हूँ यह परम पूज्य गणाचार्य विरागसागर जी महाराज के ही दिये हुए आशीर्वाद का प्रभाव एवं चमत्कार है। अत: मैं पू. श्री का जीवन पर्यंत ऋणी रहूँगा।

मक्खन परोसा है

प.प्रो.वृषभ प्रसाद, वाराणसी

साहित्यकारों की परम्परा में परम पूज्य दिगम्बराचार्यश्री अकलंक स्वामी, समन्तभद्र स्वामी, जिनसेनाचार्य आदि ऐसे-ऐसे दिग्गज आचार्य हुए जिनकी रचनाओं के सामने संसार के सभी रचनाकर नत्मस्तक थे। प्राचीन आचार्यों की उस पद्धति को वर्तमान में जीवंत करने वाले यदि कोई आचार्य हुए हैं तो वो बुन्देल खण्ड के प्रथमाचार्य परम पूज्य राष्ट्रसंत गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर जी महाराज है। जिन्होंने इतने बड़े संघ का समाज का संचालन करते हुए एवं श्रमणचर्या का विधिवत् पालन करने के बावजूद भी समय निकाल कर इतनी महान टीकाओं का सृजन कर हम सभी के लिये मक्खन परोसा है। यह धरा एवं धरावासी युगों-युगों तक आपके ऋणी रहेंगे।

स्तुत्य रहेगी

प्रो.प. फूलचंद जी प्रेमी

आचार्य श्रुतसूरि जिस ग्रंथ पर टीका लिखने का साहस नहीं जुटा पायें, जिसका पद्यानुवाद करने की हिम्मत अनेकानेक पण्डित लोग नहीं कर सके ऐसे दर्पणवत् मुनियों को मार्गदर्शन देने वाले लिंग पाहुड ग्रंथ पर परम पूज्य आचार्यों के आचार्य गणाचार्य श्री विरागसागर जी महाराज ने टीका लिखकर बड़ा ही महान कार्य किया है। आपके द्वारा लिखी गई श्रमण प्रबोधिनी नामक यह टीका संपूर्ण विद्वत जगत में परमादरणीय एवं स्तुत्य रहेगी।

अध्ययन अवश्य करें

पं. प्रो. अशोक कुमार जी

पू. आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी ने मात्र २२ गाथाओं में लिंगपाहुड ग्रंथ लिखा, शिथलाचारी मुनियों के लिये चुनौती स्वरूप यह ग्रंथ समस्त श्रमणों की आंखे खोल देने वाला है फिर भी अभी तक संक्षेप में था। किन्तु परम पूज्य गणाचार्य शिरोमणि राष्ट्रसंत गणाचार्य श्री विरागसागर जी महाराज ने इन २२ गाथाओं पर ४०० पृष्ठ की जो विस्तृत टीका लिखी है वह निश्चित ही आ. कुन्दकुन्द के भावों में उतर कर लिखी है तभी तो आपकी यह टीका सभी के मन को झकझोर देने वाली है। मैं समस्त श्रमणों से निवेदन करता हूँ कि यदि आप उज्जवल चरित्र एवं भविष्य चाहते हैं तो इस श्रमण प्रबोधिनी टीका का अध्ययन अवश्य करें।

प्रत्येक कार्य ऐतिहासिक

पं. प्रो. सनत कुमार जी, जयपुर

परम पूज्य सिद्धान्त वाचस्पति, प्रखर वक्ता राष्ट्रसंत गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर जी महाराज ने सन् २०१२ में जयपुर की धरा पर २०० से अधिक साधुओं की सन्निधि में जो ऐतिहासिक युगप्रतिक्रमण एवं यतिसम्मेलन कराया था। उसकी चर्चा आज तक देश-विदेश में व्याप्त है। कार्यक्रम के अध्यक्ष माननीय भालचंद जी आपसे इतने प्रभावित है कि उन्होंने कहा है अब आचार्यश्री ५०० पिच्छियों का भी सम्मेलन करायेंगे तो हम सहर्ष तैयार हैं तथा निरंतर आपकी आज्ञा के आकांक्षी हैं निश्चित ही पूज्य गणाचार्य भगवन् का प्रत्येक कार्य अपने आप में अनूँठा एवं ऐतिहासिक होता है।

इतिहास भुला नहीं सकता

कु. श्वेता जैन , झाँसी

परम पूज्य आचार्यश्री विरागसागर जी महाराज की ख्याति जग विख्यात है। गुरुवर विरागसागर जी के चरणों में तो स्वर्ग जैसा लगता है। पास आकर देखों तो समवशरण सा लगता है। आचार्य श्री ने इतने महान-महान कार्य किये है जिन्हें इतिहास कभी भुला नहीं सकता। आचार्य श्री को इतनी उपाधि मिल चुकी हैं लेकिन फिर भी उनके कृतित्व के समाने कम हैं अर्थात् उनका कृतित्व विराट है। इसलिए आपकी उपाधि और अधिक होना चाहिए। पूज्य आचार्यश्री कारीगर की तरह हैं क्योंकि जिस प्रकार पत्थरों की मूर्ति बनाने का कार्य कारीगर करता है उसी प्रकार मानव में मानवता का रूप गुरुवर ही दे सकते हैं।

ऐसे पूज्य गुरुवर के चरणों में मैं अपनी एवं अपने परिवार की ओर से बारम्बार नमोस्तु करती हूँ।

आप जैसा संत दूजा नहीं है

संदीप बोहरा, अजमेर

परम पूज्य राष्ट्रसंत गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर जी महाराज किसी समाज, नगर, प्रांत या व्यक्ति विशेष के संत नहीं हैं वरन संपूर्ण मानव जाति के संत है। आपका व्यक्तित्व आकाश में चमकने वाले सूर्य की भांति है जो संसार के प्रत्येक आंगन में समान रोशनी देता है लेकिन किसी से बंधता नहीं हैं।

आपके शरण में गरीब, अमीर, जैन-जैनेतर के लिए समान रूप से आश्रय प्राप्त होता है यह इस भौतिक युग के लिये बहुत आश्चर्यकारी बाग हैं। मैंने आपको जाना ही नहीं बड़ी निकटता से देखा है इसलिए पूर्ण विश्वास से कहता हूँ कि आप जैसा महानताओं से भरा संत कोई दूसरा नहीं है।

आपका २८वाँ आचार्यपदारोहण हम भक्तों के लिये अपार खुशियाँ लेकर आया है क्योंकि आज का ही वह दिन था जिस दिन आप परमेष्ठी के तृतीय पद पर आशीन हुए थे। आज हम सभी अजमेरवासी आपके श्री चरणों में बारम्बार नमोस्तु-३।

श्रेष्ठ आचार्य

श्री धन्यकुमार मोतीचंद शाह, सोलापुर

भारत की इस पावन भूमि में अनेक महान ६३ श्लाका पुरुषों ने जन्म लिया उन्हीं तपस्वियों में आध्यात्योग की साधना से अभिसिंचित चारित्र शिरोमणि, उपसर्ग विजेता परम पूज्य राष्ट्रसंत श्री १०८ विरागसागर जी महाराज हैं छोटी उम्र में ही आपकी कर्तव्य परायणता, शिष्यानुग्रह, संघ संचालन आदि अनेक गुणों को देखकर आचार्य विमलसागर जी महाराज ने आपको आचार्यपद प्रदान किया। आपमें वात्सल्य, भक्ति, ज्ञान, समता, चारित्र तप, श्रेष्ठ चिंतन, ज्ञानाराधना आदि आचारत्व के मूल्यमंत्र समाहित है अत: आप संपूर्ण विश्व में बहु प्रतिभा के धनी श्रेष्ठ आचार्य हैं। आपके २८वें आचार्यपदारोहण दिवस पर बारम्बार नमोस्तु-३।

आचार्य पदारोहण पर

कु. पल्लवी पाटनी, दुर्ग

हर पल सोच रही हूँ गुरुवर क्या उपहार सजाऊँगी,
आचार्य पदारोहण दिवस को गुरु चरणों में मनाऊँगी।
हर पल खुशियों मिले आपको, दूर हो संकट की राहें,
रहो चिरायु मेरे गुरुवर, भक्त सदा ये ही चाहे।।

मैं उन चरणों का चेरा

नितेश ज्ञानचंद जी पाटनी, इचलकरंजी

है परम दिगम्बर मुद्रा जिनकी वन-वन करें वसेरा,
मैं उन चरणों का चेरा, हो वंदन उनको मेरा।
शाश्वत सुखमय चैतन्य सदन में रहता जिनका डेरा,
मैं उन चरणों का चेरा, हो वंदन उनको मेरा।।
जहाँ क्षमा मार्दव आर्जव, सत्य शुचिता की सौरभ महते,
संयम तप-त्याग आकिन्चन्य स्वर परिजत में चहके।
है बह्मचर्य की रचना से आराध्य बने जो मेरा,
मैं उन चरणों का चेरा, हो वंदन उनको मेरा।।
अंतर बाहर द्वादशांग तप से जो कर्म कालिमा दहते,
उपसर्ग परिसह कृत बाधा, जो साम्य भाव से सहते।
जो शुद्ध अतीन्दिय आनन्द रस का लेता स्वाद धनेरा,
जो ज्ञान चरित्र वीर्य तप आचार्यों के धारी।
मैं उन चरणों का चेरा, हो वंदन उनको मेरा।।
जो मन वच तन का आलम्बन तज, निज चैतन्य विहारी
शाश्वत सुख दर्शक वचन किरण से करते सदा सवेरा
नित समता स्तुति वंदन अरू स्वाध्याय सदा जो करते
प्रतिक्रमण और प्रत्याख्यान कर सब पापों को दहते
चैतन्य राज की अनुपम निधियाँ जिनमें करें वसेरा
मैं उन चरणों का चेरा, हो वंदन उनको मेरा।।

नाम का जादू

श्रीमती उर्मिला शेषराज पाटनी, इचलकरंजी

परम पूज्य गणाचार्य श्री विरागसागर जी गुरुदेव के चरणों में नमोस्तु-३
जब से देखा आपके वात्सल्य का जादू,
न रहता है मेरा दिल खुद पर काबू।
रोम-रोम उठ जाते, आपका नाम सुनकर,
आपके दर्शन पाने हो जाती हूँ वेखबर।।
आपके चरण कमल के दर्शन पाकर,
हो जाती है मेरी शत् प्रभाकर।
आपके कोमल कर से आशीष पाकर,
हो जाता है मेरा संघर्षमय जीवन उजागर।।

साधना के सरताज

सूरि विमल सिन्धु के परम भाल,
विराग सिन्धु हैं प्रेम की मिशाल।
मेरे मन में समा गये वो ऐसे,
मिसरी की मिठास घुली हो जैसे।
प्रेम बीज वो दिया है ऐसे,
सागर में मोती सोये हो जैसे।
यह विराग कली विमल सूरि की,
प्रेम नेत्र संचमित संवरी सी।
पथरियाँ नगरी को हम शीश झुकाते हैं,
साधना के सरताज की महिमा गाते हैं।
सद्गुणों की उपमा नहीं आपकी,
तप-त्याग अपार है तभी तो
आपका नाम विराग है।

बीना ठोलिया पांडीचेरी

विज्ञापन दर

रंगीन - फुल पृष्ठ	-	11000/-	ब्लेक एण्ड व्हाईट - फुल पृष्ठ	-	5000/-
रंगीन - हॉफ पृष्ठ	-	6000/-	ब्लेक एण्ड व्हाईट - हॉफ पृष्ठ	-	2500/-
रंगीन - चौथाई पृष्ठ	-	3000/-	ब्लेक एण्ड व्हाईट - चौथाई पृष्ठ	-	1500/-

'विरागवाणी' मासिक पत्रिका की सदस्यता एवं विज्ञापन हेतु संपर्क करें-

प्रबंध सम्पादक : श्री अनूप कुमार जैन

जी-१४१ गौतम नगर, भोपाल-२३ ☎: 0755-2789703, मो.9425016879

रयणसार (रत्नत्रय वर्धिनी टीका) के परिप्रेक्ष्य में सम्यक्त्वविहीन दीर्घ संसारी साधु

प्रो. कमलेश कुमार जैन

(पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, जैन बौद्धदर्शन विभाग) काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

सामान्यत: रयणसार को आचार्य कुन्दकुन्द की रचना माना जाता है। इसमें कुल १६७ गाथाएँ हैं, जो प्राकृत भाषा में निबद्ध हैं। संस्कृत में इसे रत्नसार भी कहा गया है।[१] क्योंकि इसमें सम्यग्दर्शन रूपी रत्न का विवचेन किया गया है। इस ग्रन्थ पर इक्कीसवीं शताब्दी के प्रबुद्ध आचार्यश्री १०८ विरागसागर जी महाराज ने रत्नत्रयवर्धिनी संस्कृत टीका की रचना की है। यह टीका अत्यन्त सरल और मूल के आशय को स्पष्ट करने वाली हैं।

पूज्य आचार्यश्री ने अपने कथन की पुष्टि हेतु अनेक आचार्यों के ग्रंन्थों से मूल उद्धरण प्रस्तुत कर न केवल अपने आगम ज्ञान की पुष्टि की है, अपितु अपने बहुश्रुत होने का भी परिचय दिया है।

ज्ञान और वैराग्य के धनी पूज्य १०८ आचार्यश्री विरागसागर जी महाराज ने 'नामूलं लिख्यते किञ्यित' इस मल्लिनायीय प्रतिज्ञा का अनुसरण करते हुये अपनी लेखनी चलाई है, जो स्तुत्य है।

जैन शास्त्रों में सम्यक्त्व की महिमा सर्वाधिक गाई गई है क्योंकि प्रत्येक प्राणी दु:ख से छुटकारा पाना चाहता है और आत्मन्तिक सुख की प्राप्ति हेतु प्रयन्त करता है।

सम्यक्त्व और मोक्ष- ये दो किनारे हैं, यानि संसार से मोक्षमहल की यात्रा। मुक्तियात्रा का प्रारम्भ सम्यक्त्व से होता है सम्यक्त्व मूल है, जड़ है तो मोक्ष उस सम्यक्त्व रूपी वृक्ष का फल है। मोक्षरूपी फल की प्राप्ति के लिये श्रावक भी प्रयत्न करता है और श्रमण भी। दोनों में अन्तर केवल इतना है कि श्रावक शनै: शनै: मोक्षमार्ग में आगे बढ़ता है और श्रमण तीव्रगति से। परन्तु बढ़ते दोनों हैं और लक्ष्य भी दोनों का एक है- मोक्षप्राप्ति यदि जड़ कमजोर है तो वृक्ष भी कमजोर रहेगा और मोक्षरूपी फल की प्राप्ति नहीं हो सकेगी। अत: सम्यक्त्व रूपी जड़ का मजबूत होना अपेक्षित है।

सम्यक्त्व के बिना न तो श्रावक बना जा सकता है और न श्रमण। साथ ही सम्यक्त्व के बिना मोक्ष की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। छहढालाकार कविवर दौलतराम जी को सम्यक्त्व को मोक्षमहल की प्रथम सीढ़ी कहा है।[२] जो साधु सम्यक्त्व से रहित है, उसका अभी मोक्षमार्ग में प्रवेश ही नहीं है ? तब फिर मोक्षमहल में पहुँचना कैसे सम्भव है ?

आचार्य कुन्दकुन्द ने अपने रयणसार में स्पष्ट लिखा है कि जो सम्यक्त्व रहित है वह भण्डनयाचनशील है[३] अर्थात् बनावटी और याचना करने वाला है, ऐसा साधु कभी भी सम्यग्दृष्टि नहीं हो सकता है और जो सम्यक्त्व से रहित है वह न घर का होता है और न घाट का। न तो उसे सांसारिक भोगोपभोगों की प्राप्ति होती है इसीलिये आचार्यश्री विरागसागर जी महाराज ने अपनी सम्यक्त्व वर्धिनी टीका में स्पष्ट लिखा है कि- भण्डनशील: याचनाशीलश्चं दीर्घसंसारी भवति।[४] अर्थात् जो साधु बाह्य में तो साधु वेष में है, किन्तु अन्तरङ्ग में याचनावृत्ति है तो वह मोक्ष की प्राप्ति नहीं कर सकता है, अपितु वह दीर्घकाल तक संसारसागर में परिभ्रमण करता रहेगा। वस्तुत: साधु अन्तरङ्ग से बना जाता है, मात्र बाह्य वेष धारण करने से नहीं। साधु को अयाचकवृत्ति वाला होना चाहिये।

अब प्रश्न यह है कि सम्यग्दर्शन से रहित साधु कौन है ? इसका उत्तर देते हुए पूज्यवर आचार्य कुन्दकुन्द देव कहते हैं कि-

देहादिसु अणुरत्ता विक्षयासत्ता कसायसंजुत्ता।
आदसहावे सुत्ता, ते साधु सम्यपरिचत्ता।।[५]

अर्थात् शरीर आदि में जो अनुरक्त है, पञ्चेन्द्रियकि के विषयों में जिसकी आसक्ति है, क्रोधादि कषायों से जो मुक्त है और आत्मस्वभाव से शून्य है, अर्थात् आत्मस्वभाव के प्रति जाग्रत नहीं है, ऐसा साधु सम्यक्त्व से रहित है। यहाँ इस गाथा में आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने सम्यक्त्व रहित साधु के जो चार विशेषण दिये हैं, उनमें तीन विशेषण तो सम्यक्त्व विहीन साधु के बाह्य चिन्ह के रूप में देखे जा सकते हैं तथा एक आत्मस्वभाव में सोया हुआ कहा है। अर्थात् आत्मज्ञान के प्रति जो प्रमादी है, जाग्रत नहीं है।

यहाँ आचार्य विरागसागर जी महाराज ने अपनी रत्नत्रय वर्धिनी संस्कृत टीका में स्पष्ट लिखा है कि- अनात्मीय पदार्थेषु स्वरारीदादिषु ते अनुरक्ति विभ्रति। तेषाभयम् अनुराग एव सम्यक्त्व हीनत्वं समर्थयति। अत्रादिपदेन गृह-भूमि-कलत्र-पुत्र-मित्र-धन-धान्यादीनां ग्रहणम् देहादिषु आत्मीयभावोनुरागो वा मूढदृष्टेर्लक्षणम्।[६]

अर्थात् आत्मा और शरीर- ये दो भिन्न-भिन्न पदार्थ हैं। साधु का जीवन धन एक मात्र आत्मा होता है और वह उसी में तल्लीन रहता है। उससे भिन्न सभी पदार्थ अनात्मीय हैं। अनात्मीय पदार्थ भी दो प्रकार के हैं- एक वे जो शरीर आदि से भिन्न हैं। दूसरा स्वयं शरीर भी परपदार्थ है, क्योंकि इस शरीर से जब आत्मा निकल जाता है तो शरीर यही पड़ा रहता है। ऐसी स्थिति में जो साधु आत्मोन्मुखी है वह शरीर में रहते हुये भी शरीर में अनुरक्त नहीं रहता है। अर्थात् शरीर को सजाने-सम्हालने में अपना समय व्यतीत नहीं करता है। मूल गाथा में 'देहादिसु' पद दिया है। यहाँ आदि पद से क्या ग्रहण करना है, इसको स्पष्ट करते हुये आचार्य विरागसागर जी महाराज ने लिखा है कि- आदि पद से घर, जमीन, स्त्री, पुत्र, मित्र, धन और धान्य आदि को ग्रहण करना चाहिये। घर, जमीन आदि को बाह्य में साधु ग्रहण नहीं करता है, अपितु इनके प्रति साधु के मन में आसक्ति होना ही सम्यक्त्व हीनता है। क्योंकि साधु जिन पञ्चपापों का पूर्णत: त्यागी होता है, उनमें परिग्रह भी एक है। इस परिग्रह रूपी पाप के कारणभूत घर-जमीन आदि में ममत्व रखना परिग्रही का लक्षण है।

आचार्य उमास्वामी ने 'मूर्च्छा परिग्रह:'[७] ऐसा कहकर यह सिद्ध कर दिया है कि न केवल शरीर से भिन्न बाह्य पदार्थों में मूर्च्छा रखना परिग्रह है, अपितु शरीर के प्रति भी मूर्च्छा अर्थात् ममत्वभाव रखना परिग्रह ही है। और जो परिग्रही है, वह साधु नहीं है, वह मूढ़दृष्टि है। आचार्य समन्तभद्र ने सच्चे साधु की जो परिभाषा कहीं है, उसमें स्पष्ट लिखा है कि-

विषयाशावशातीतो निदारम्भो परिग्रह:।
ज्ञान-ध्यान-तपोरक्त: तपस्वी स प्रशस्यते।।[८]

इस समन्तभद्रोक्त पद्य में साधु का लक्षण परिग्रह से रहित होना कहा गया है। यहाँ अन्य बाह्य पदार्थों के साथ ही शरीरासक्ति स्वयं परिग्रह है। इसलिये आचार्य विरागसागर जी महाराज का संकेत आचार्य समन्तभद्रोक्त सम्यग्दर्शन के लक्षण पद भी है, जिसमें वे कहते हैं कि-

श्रद्धानं परमार्थानामाप्तागमतपोभृताम्।
त्रिमूढ़ापोढमष्टाङ्गं सम्यग्दर्शनमस्मयम्।।[९]

यहाँ इस पद्य में तीन मूढ़ताओं से रहित जीव को सम्यग्दृष्टि कहा है। आचार्य विरागसागर जी महाराज कह रहे हैं कि- शरीरादिषु आत्मीयभावोनुरागोक वा मूढदृष्टर्लक्षणम्। अर्थात् शरीरादि में आत्मीय भाव अथवा अनुराग रखना मूढदृष्टि का लक्षण है।

आचार्य विरागसागर जी ने अपने उपर्युक्त कथन की पुष्टि के लिये पञ्चाध्यायी, मोक्षप्राभृत, दृष्टोपदेश तत्त्वानुशासन, प्रवचनसार, समाधिशतक, शीलप्राभृत, बोधप्राभृत, आत्सानुशासन और परमात्मप्रकाश आदि विविध ग्रन्थों से मूल सन्दर्भ देकर अपने कथन की पुष्टि की है। आगे वे कहते हैं कि- आदसहावे सुत्ता के ठीक विपरीत अर्थात् आत्मा के कार्यों में जागृत होने पर ही जीव श्रेष्ठ सुख को प्राप्त करने में सफल होता है- आत्मरूर्मणि जागृता एव पदम सौख्यं प्राप्तुं सफला अवन्ति एवं सम्यगवबुद्धय हे भव्य! देहादिषु परद्रव्येषु अनुरक्तिं परित्यज्य निजात्म स्वभावाराधनायै प्रयतस्व।[१०]

आचार्य विरागसागर जी महाराज ने प्रारम्भ में ही यह कहा है कि शरीरादि में मूर्च्छा रखना सम्यक्त्व रहित होने की निशानी है क्योंकि जो वास्तविक साधु होता है वह मात्र धन-धान्यादि क्षुद्र पदार्थों के प्रति ही अनाक्षक्त नहीं होता है, अपितु अहमिन्द्र आदि पदों को भी हेय मानता है- यथार्थश्रामण्यधारिणां जिनधर्मप्रतिष्ठा संवर्धकानां तु अहमिन्द्रपदमपि हेयम्भवति, किं पुन: धन-धान्यादिक्तम्।[११]

इन सबके बावजूद साधु को अपने संयम की साधना के लिये कुछ उपकरण रखने पड़ते हैं, जिसमें पिच्छी और कमण्डल तथा शास्त्र प्रमुख हैं। पिच्छी सूक्ष्म जीवों की रक्षा के लिये अपेक्षित है और कमण्डलु शौचोपकरण है। साथ ही अपने उपयोग को स्थिर रखने के लिये शास्त्र को भी अपने पास कदाचित् रखता है, किन्तु साधुचर्या का ठीक-ठीक निर्वाह करने के लिये ही इन उपकरणों को स्वीकार करता है, उनके प्रति ममत्वभाव कदापि नहीं रखता है और यदि उनके प्रति मन में कहीं ममत्वभाव है तो वह वास्तविक साधु नहीं है।

आचार्य विरागसागर जी महाराज ने यथार्थ श्रमण के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिये अपनी रत्नत्रयवर्धिनी टीका में प्रवचनसार (३/३९) ग्रन्थ की जो गाथा उद्धृत की है वह इस प्रकार है-

परमाणुपमाणं वा मुच्छा देहादियेसु जस्स पुणो।
विज्जादि जादि सो सिद्धिं ण लहादि सव्वागमधरो वि।।[१२]

अर्थात् देहादि परद्रव्यों में यदिक साधु परमाणु के बराबर भी मूर्च्छा (ममत्व) भाव रखता है तो वह समस्त आगमों का ज्ञाता होते हुये भी मोक्षप्राप्ति रूप सिद्धि को प्राप्त नहीं कर सकता है। उनके अनुसार उपकरणादि में मूर्च्छाभाव परिग्रह रूपी दोष को उत्पन्न करता है- उपकरणेष्वपि मूर्च्छाभावः परिग्रहदोषमेवोत्पादयति।[१३] अपने इस कथन की पुष्टि के लिये आचार्य विरागसागर जी महाराज ने वट्टकेराचार्यकृत मूलाचार की आचारवृत्ति से जो उद्धरण प्रस्तुत किया है वह ध्यातव्य है। वे लिखते हैं कि- इतरेषु च संयम-ज्ञान-शौचोपकरणेषु (निर्ममः)ममत्व रहितत्वं निःसंगत्वम् (असंगः) असंगव्रतत्वम्। किमुक्तं भवति- जीवाश्रिता ये परिग्रहाः ये चानाश्रिताः क्षेत्रादयः जीवसम्मवाश्च, तेषां सर्वेषां मनोवाक्कायैः सर्वथा त्यागः, इतरेषु संयमाद्युपकरणेषु च असङ्गम्, अतिमूर्च्छा दहितत्वम् इत्येतद् असङ्गव्रतम्।[१४]

अर्थात् अन्य संयम, ज्ञान और शौच के उपकरणों में ममत्व रहित होना असंगव्रत अर्थात् अपरिग्रहव्रत है। इसके अतिरिक्त जीव के आश्रित जो शरीरादि परिग्रह है और जीव से भिन्न जो क्षेत्र-वास्तु आदि परिग्रह हैं, उन सबका मन, वचन और काय से सर्वथा त्याग करना अपरिग्रह महाव्रत है।

अपने इस कथन की पुष्टि आचार्य विरागसागर जी महाराज ने सर्वार्थसिद्धि आदि ग्रन्थों से की है, जिसमें उपकरणों के प्रति आसक्ति रखने वाले उपकरणबकुश आदि साधु में कदाचित् आर्त्तध्यान एवं कृष्णादि अशुभ लेश्याओं की सम्भावना सक्त की है। इसलिये साधु को संयमोपकरणों में भी मोह का त्याग करना चाहिये। क्योंकि वास्तव में साधु का उपकरण जिनमुद्रा आदि ही है।[१५]

आचार्य श्री विरागसागर जी महाराज ने साधु के अट्ठाईस मूलगुणों एवं शील के चौरासी हजार भेदों की चर्चा करते हुये लिखा है कि- इन गुणों से युक्त साधु श्रमणसंघ में पूर्ण चन्द्रमा की तरह सुशोभित होता है[१६] और इससे विपरीत कषायों से युक्त कलह प्रिय साधु जिनधर्म के विराधक होते हैं।

गुरु की आज्ञा के विना गुरु कुलवास का त्यागकर स्वच्छन्दवृत्ति अपनाने एवं मर्यादाहीन एकलविहारी साधु को भी जिनधर्म का विराधक कहा है। इसकी पुष्टि हेतु आचार्य विरागसागर जी महाराज ने मूलाचार से एक गाथा उद्धृत की है, जिसमें कहा गया है कि- जो गुरु के उपदेश को ग्रहण न करते हुये आचार्य कुल को त्यागकर एकाकी विहार करता है, वह पापी श्रमण है। गाथा इस प्रकार है-

आयदियकुलं मुच्चा विहरादि समणो य जो दु एगागी।
ण य गेण्हदि उवदेसं पापहसभणात्ति वुच्चदि दु।। [१७]

आचार्य श्री ने राज्य अथवा शासन की सेवाओं को ग्रहण करने वाले अथवा राजापिण्ड के भोक्ता साधु को राजादिसेवक की संज्ञा से विभूषित किया है और अन्त में यह उपदेश दिया है कि- साधु को जिनधर्म विराधक सभी प्रवृत्तियों का त्यागकर जिनधर्म की आराधना में सतत उद्यत होना चाहिये।[१८]

इसी क्रम में आचार्यश्री ने मूलाचार को आधार बनाकर कहा है कि- व्यञ्जन, अङ्ग, स्वर, छिन्न, भूमि, अन्तरिक्ष, लक्षण और स्वप्न- इस आठ निमित्तों का आश्रय लेकर अथवा वैद्यकशास्त्र का आश्रय लेकर श्रमणों को आजीविका नहीं चलानी चाहिये।[१९] आचार्यश्री का यह भी कहना है कि यद्यपि ये विद्याएँ जनोपयोगी हैं, किन्तु साधु द्वारा जीवन यापन के रूप में इनका प्रयोग करना है, निन्दनीय है, वर्जित है।[२०] क्योंकि ये सभी कार्य संसार भ्रमण के कारण हैं और दुर्गति में ले जाने वाले हैं?

आहारचर्या में भी साधु को उत्पादन आदि दोषों से रहित आहार ग्रहण करना चाहिये।[२१]

आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने पाप-कार्यों में संलग्न, कषायों से युक्त परिग्रह में आसक्त और लोक व्यवहार में संलग्न साधु को सम्यक्त्वविहीन कहा है। इसी को स्पष्ट करते हुये आचार्यश्री विरागसागर जी महाराज ने रत्नत्रयवर्धिनी टीका में लिखा है कि- आरम्भकार्य तत्पदाणां कषाययुक्तानां च सम्यक्त्वहीनत्वं निरूपितम। कषाया दुःख सहस्रदायकाः।[२३] परिग्रहासक्तस्य दुर्गतिः।[२४] लौकिक क्रियासु च ये साधनो निदतास्तेपि सम्यक्त्व रहिता[२५] आदि।

इसी प्रकारक आगे लिखा है कि- साधुओं के लिये स्वकल्याण ही प्रमुख है। ज्ञान और उपदेश आदि से पर कल्याण भी करना चाहिये, किन्तु वह गौण है। कदाचित् परकल्याणक में भी साधु की प्रवृत्ति देखी जाती है, किन्तु संसार की वृद्धि करने वाली लौकिक क्रियाओं में कभी भी प्रवृत्त नहीं होना चाहिए।[२६]

सम्यक्त्व विरोधिनी अन्य कौन सी क्रियाएँ हैं? इनका संकेत करते हुये आचार्यश्री लिखते हैं कि- इतरेषां स्वस्भादन्येषां केषाञ्चिदपि पुरुषाणां दर्पं गुणप्रशंसादिकं न सहन्ते, न षोढुं समर्था: भवन्ति, अन्येषां गुण प्रशंसन श्रुत्वा दोषं प्रकटयन्ति, यद्वा विरोधरूपेणक तत्प्रतिवादं कुर्वन्ति, ते सम्यक्त्व विदोधिनी क्रियां विदधतीत्याशय:।[२७] अर्थात् स्वयं के अतिरिक्त अन्य किसी पुरुष अथवा साधु के गुणों की प्रशंसा को सहन न करना, न सुनना अथवा अन्य की प्रशंसा को सुनकर शेष प्रकट करना और विरोध स्वरूप उसका प्रतिवाद करना सम्यक्त्व विरोधिनी क्रियाएँ हैं। क्योंकि वास्तविक साधु समुद्र की तरह गम्भीर और निर्विकार होता है।[२८] यदि कोई साधु स्वयं की प्रशंसा करता है अथवा अपनी महिमा को स्वयं प्रकट करता है तो वह भी सम्यक्त्वविहीन है। क्योंकि सम्यक्त्वसहित साधु अपने को तृणवत् मानता है। उपग्रहन गुण से युक्त साधु अपने अपने गुणों को कभी भी प्रकट नहीं करता है।[२९] पूज्य आचार्यश्री ने आत्मप्रशंसा को तीव्र कषाय का चिन्ह स्वीकार किया है।[३०]

आचार्यश्री के अनुसार भोजन के प्रति लालसा रखना सम्यक्त्वविहीनता है।[३१] सम्यक्त्वविहीन साधु की चेष्टा कुत्ते के समान होती है।[३२] जो श्रावक यथाजात दिगम्बर स्वरूप को देखकर मात्सर्य के कारण यथोचित्त आदर नहीं करता है, वह मिथ्यादृष्टि है। साधु भी अन्य संयमी साधुओं अथवा श्रावकों को देखकर उनके प्रति अनुराग करता है अथवा वात्सल्यभाव से भर जाता है।[३३]

इस प्रकार साधु की विविध क्रियाओं के सन्दर्भ में पूज्य आचार्यश्री विरागसागर जी महाराज ने रयणसार पर लिखित अपनी रत्नत्रयवर्धिनी टीका में स्पष्ट किया है कि साधु को क्या हेय है और क्या उपादेय है। हेय क्रियाएँ करने वाले साधु सम्यक्त्वविहीन होने से संसार सागर में अनन्तकाल तक भ्रमण करते रहते हैं, अतएव वे दीर्घ संसारी हैं।

ग्रन्थ-सन्दर्भ-

१. प्राकृत साहित्य का इतिहास, पृष्ठ २६१
२. छहढाला, ३/१७
३. रयणसार, गाथा ४४
४. रयणसार : रत्नत्रयवर्धिनी टीका, पृष्ठ ७४१
५. रयणसार, गाथा १००
६. रयणसार : रत्नत्रयवर्धिनी टीका, पृष्ठ ७४२
७. तत्त्वार्थसूत्र, सूत्र ७/१७
८. रत्नकरण्डश्रावकाचार, पद्य
९. रत्नकरण्डश्रावकाचार, पद्य
१०. रयणसार : रत्नत्रयवर्धिनी टीका, पृष्ठ ७५०
११. वही, पृष्ठ ७५६
१२. वही, पृष्ठ ७५७
१३. वही, पृष्ठ ७५७
१४. वही, पृष्ठ ७५७
१५. वही, पृष्ठ ७५८
१६. वही, पृष्ठ ७६०
१७. वही, पृष्ठ ७६३
१८. वही, पृष्ठ ७६३
१९. वही, पृष्ठ ७६६
२०. वही, पृष्ठ ७६६
२१. वही, पृष्ठ ७७०
२२. वही, पृष्ठ ७७६
२३. वही, पृष्ठ ७७७
२४. वही, पृष्ठ ७७८
२५. वही, पृष्ठ ७७९
२६. वही, पृष्ठ ७८०
२७. वही, पृष्ठ ७८४
२८. वही, पृष्ठ ७८५
२९. वही, पृष्ठ ७८५
३०. वही, पृष्ठ ७८६
३१. वही, पृष्ठ ७८८
३२. वही, पृष्ठ ७९१
३३. वही, पृष्ठ ७९४

आवास : पत्राचार- एन-१३/२३ ई-१४ ए
सराय सुरजन, अखाड़ा उमानाथ , वाराणसी

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

गणाचार्य विरागसागर जी और उनकी रयणसार रत्नत्रय वद्धिनी टीका

इंजी. दिनेश जैन, भिलाई

जैन दर्शन में सब जीवों के कल्याण की कामना की गई हैं। जीवों के कल्याण हेतु अनादिकाल से सतत्, निराबाध तीर्थंकरों की देशना चलती रही। इस सतत् प्रवाहमान निराबाध देशना को निर्ग्रन्थ दिगम्बर आचार्यों ने जन-जन के कल्याण के हेतु कठिन, कठोर परिश्रम करके निष्पक्ष, निर्लोभ भाव से लिपिबद्ध किया है। इन जैनाचार्यों की परम्परा में ईसा की प्रथम शताब्दी में, भारतीय तत्त्व चिन्तन के इतिहास में आगम परम्परा का संवहन करते हुए महान तत्त्वान्वेषी, स्व संवेद्य परमानन्द को प्राप्त आचार्य शिरोमणि, चारित्रचक्रवर्ती, अध्यात्मिक ज्ञान गंगा प्रवाहित करने वाले कुन्दकुन्द स्वामी हुये हैं। जिनकाक व्यक्तित्व सूर्य-चन्द्र के समान प्रकाशित है। उनके तत्त्वज्ञान में जहाँ निर्मलज्ञान की भास्कर सहश छटा लक्षित होती है वहीं अहिंसा, करूणा समता और वैराग्य की चंद्र सहश शीतलता प्राप्त होती है। दिगम्बर जैन आम्नाय में उन्हें इतना महत्व दिया गया है कि भगवान् महावीर एवं गौतम गणधर के पश्चात् इन्हीं का स्मरण किया गया है-

मंगलं भगवान वीरो, मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं कुन्दकुन्दार्यो, जैन धर्मोस्तु मंगलम्।।

आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी ने स्वपर कल्याण के विचार से चौरासी पाहुड़ लिखे। वर्तमान में समयसार, प्रवचनसार, पंचास्तिकाय, अष्टपाहुड़, नियमसार, वारसाणुवेक्खा, दशभक्ति, रयणसार आदि को छोड़कर अन्य ग्रन्थ उपलब्ध नहीं हैं।

परवर्ती आचार्यगण आचार्य भगवन् कुन्दकुन्द स्वामी के अत्यन्त कृतज्ञ हैं क्योंकि उन्हीं के ग्रन्थों को आधार बनाकर उन्होंने अनेक, ग्रन्थों, टीकाओं की रचना की है। विशेष रूप से उनके तीन ग्रन्थ पंचास्तिकाय, प्रवचनसार और समयसार नाटकत्रय तथा प्राभृतत्रय कहे जाते हैं। समयसार ग्रन्थ दिगम्बर, श्वेताम्बर, स्थानक तीनों जैन आम्नाओं में बड़े सम्मान और आदर के साथ पढ़ा जाता है।

रयणसार ग्रन्थ की गाथाओं की संख्या, पाठ एवं क्रम में भी अन्तर दृष्टि गोचर होता है। गाथायें १६७ एवं १५५ मुख्य प्रतिलिपियों में प्राप्त होता है। यह ग्रन्थ आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी द्वारा रचित है, इसमें कोई संदेश नहीं है। प्रवचनसार, विनयसार, दर्शनपाहुड़ और रयणसार का प्रारंभ तीर्थंकर महावीर के मंगलाचरण से होता है। नियमसार की भांति रयणसार में भी ग्रन्थ का निर्देश किया गया है यथा-

णमिऊण जिणवीरं ... वोच्छामि णियमसारं.....
णमिऊण वड्ढमाणं ... वोच्छामि रयणसारं..... इत्यादि

इन सभी ग्रन्थों के अन्त में रचना का पुनः नामोल्लेख किया गया है। ऐसे अनेक उदारण हैं।

आचार्य भगवन् कुन्दकुन्द के ग्रन्थों के अध्ययन से लगता है कि वे शिथिलाचार के घोर विरोधी थे। उन्हें शिथिलाचार न तो श्रमणों में न श्रावकों में मान्य था। इस संदर्भ में वे कठोर प्रशासक के रूप में दिखते हैं। वर्तमान में हुण्डावसर्पिणी काल चल रहा है इसमें उत्तरोत्तर शिथिलाचार बढ़ना स्वाभाविक है। अतः आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी के ग्रन्थ आत्म कल्याण के लिये, जैन समाज के लिये, श्रमण संस्कृति के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इन ग्रन्थों की उत्तरोत्तर उपयोगिता बढ़ती जावेगी।

वर्तमानक में श्रावक और श्रमण के समन्वय के नाम पर कुछ लोगों द्वारा निजि स्वार्थ के पोषण हेतु श्रमण संस्कृति में शिथिलाचार को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। ऐसे व्यक्ति तर्क देते हैं कि काल के प्रभाव से संहनन हीन है तो थोड़ा बहुत शिथिलाचार चल सकता है। पर वे यह विचार नहीं कर पा रहे हैं कि माना संहनन हीन है परन्तु श्रद्धान तो हीन नहीं होना चाहिये।

श्रावक धर्म और मुनि धर्म की विवेचना करने वाले अनेक स्वंतत्र ग्रन्थ हैं। यथा श्रावक धर्म हेतु रत्नकरंडक

श्रावकाचार, सागार धर्मामृत, पुरुषार्थ सिद्धिउपाय आदि ३२ श्रावकाचार हैं। मुनि धर्म हु मूलाचार, भगवती आराधना, अनगार, धर्मामृत आदि हैं। लेकिन रयणसार, एक मात्र ऐसा ग्रन्थ हे जो उभय धर्मों की व्याख्या करता है, इस ग्रन्थ की शैली में आगम और अध्यात्म का अनूठा, अनुपम समन्वय हैं। इसमें आचार्य महाराज ने श्रावक और श्रमण की व्याख्या में प्रत्येक स्थल पर कठोर अनुशासन का परिचय दिया है। कहीं भी शिथिलाचार का रंचमात्र भी दर्शन नहीं होता है।

रयणसार में १६७ गाथाएँ (कहीं १५५) १८ अधिकार हैं। यह ग्रन्थ श्रावक और श्रमण का आचार-विचार कैसा होना चाहिए। इसका विस्तार से वर्णन करता हैं। जैसे गाड़ी में दो पहिये होते हैं ऐसे ही श्रावक एवं श्रमणक धर्मरूपी गाड़ी के दो पहिये हैं। दोनों पहिये अपने अपने स्थान पर रहते हुए चलते हैं तो गाड़ी बिना किसी बाधा के सुव्यवस्थित रूप से चलती है। जीवन के प्रत्येक क्षण में श्रावक मुनि दोनों को जागरूक रहना चाहिए तथा ये विचार करना चाहिए कि हमारी अंतरंग और बाहरी प्रवृत्ति कैसी चल रही है।

गणाचार्य श्री विरागसागर जी की प्रतिभा बहुमुखी, बहुआयामी है। अनुशासन के संदर्भ में किसी भी प्रकार का समझौता उनको स्वीकार्य नहीं है। पंचाचार का पालन करते हुए उन्होंनें दिशताधिक जीवन्त तीर्थ यथा आचार्य, मुनि, आर्यिका, ऐलक, क्षुल्लकादि संयमियों का सृजन किया है। उन्होंने लगभग ८० सल्लेखनाएँ मनुष्य और अनेक निर्यंचों की कराई हैं। तथा ६५ के करीब पंचकल्याणक करवाकर श्रावकों/सामान्य जनों के लिये सम्यग्दर्शन का मार्ग प्रशस्त किया हैं। उनकी भावना निरन्तर रहती है कि मानव का कल्याण किस प्रकार हो। इस परम पावन उदात्त भावना के कारण अपने आवश्यकों का पालन करते हुए अनेक विधाओं में साहित्य सृजन (१२५) किया है। बालोपयोगी साहित्य-बाल विज्ञान, नैतिक कथा मंजूषा चिन्तन साहित्य के रूप में चैतन्य चिंतन, शोधपूर्ण साहित्य के रूप में शुद्धोपयोग, सम्यग्दर्शन, आगम चक्सू साहू, सल्लेखना से समाधि कर्म विज्ञान आदि का लेखनकर समाज में फैले भ्रम को दूर करने का सार्थक प्रयास किया है। उनकी रूचि पूर्वाचार्यों द्वारा रचित ग्रन्थों पर विशेष रूप से रही है। उन्होंने धवला जी, समयपाहुड़ आदि अनेक ग्रन्थों पर वाचनाएँ/गोष्ठी आयोजित की हैं।

गणाचार्य विरागसागर जी महाराज ने आचार्य भगवन् कुन्दकुन्द स्वामी रचित 'वारसाणुवेक्खा' पर 'सर्वोदयी टीका' एवं 'रयणसार' पर रत्नत्रयवर्द्धिनी टीका संस्कृत में लिखकर अत्यन्त उपकार किया है। उन्होंने कुछ भक्तियाँ जो संस्कृत में थी उनका प्राकृत में अनुवाद पाइय भत्ति संगहो के रूप में किया है।

उपसर्ग विजेता आचार्यश्री की सबसे बड़ी विशेषता है कि वर्तमान काल में जब परिवार के लोग वृद्धजनों को घर में नहीं रखना चाहते हैं कि कौन सेवा करे। ऐसे कलिकाल में वृक्षों को दीक्षा देकर आत्म कल्याण के पथ पर लगाने में वे किसी प्रकार का संकोच नहीं करते हैं। उनके कठोर अनुशासन एवं शास्त्र अध्ययन का प्रभाव है कि संघस्थ साधु आचार्य/मुनि के रूप में तथा माताजी गणिनी आर्यिका/ आर्यिका के रूप में जिन धर्म की पताका को हिमालय की ऊंचाईयों तक फहरा रहे हैं एवं किसी प्रकार का शिथिलाचार दृष्टिगोचर नहीं होता है।

आचार्य महाराज ने रयणसार पर रत्नत्रय वर्द्धिनी संस्कृत टीका लिख कर श्रमण एंव श्रावकों पर अत्यन्त उपकार किया है क्योंकि जैनागम में श्रमण-श्रावक उभय धर्मों को व्याख्या करने वाला एकमात्र ग्रन्थ हैं। संस्कृत टीका को करने के पूर्व ग्रन्थ के हार्ट को अपने अंतकरण में स्थापित करके, आत्मसात करके, चिन्तन करके सरल, सुबोध शैली में लिखा है। उन्होंने यह ध्यान रखा है कि आचार्य भगवन् कुन्दकुन्द स्वामी के विचारों, भावनाओं के अनुकूल कथन हो सके।

आचार्यश्री ने टीका में पूर्वाचार्यों के ग्रन्थों यथा वृहद द्रव्य संग्रह, प्राकृत पञ्च संग्रह, वारसाणुवेक्खा, समयसार, कार्तिकेयानुप्रेक्षा, आदिपुराण, मूलाचार, तत्त्वार्थसूत्र, पुरुषार्थ सिद्धियुपाय, भगवती आराधना, पंचास्तिकाय, ज्ञानार्णव आदि के उद्धरण देकर विषय को अत्यन्त स्पष्ट, सुगाह्य, सुबोध, भ्रम निवारक बना दिया है।

रयणसार की टीका का नाम रत्नत्रयवर्द्धिनी टीका सार्थक प्रतीत होता है, क्योंकि श्रमण हो या श्रावक, रत्नत्रय की वृद्धि से ही आत्मा की प्रभावना संभव है। 'आत्मा प्रभावनीयों रत्नत्रय तेजसा' अर्थात् आत्मा की प्रभावना रत्नत्रय के तेज से

करना ही प्रभावना है। ग्रन्थ पढ़कर यदि रत्नत्रय की वृद्धि नहीं हो पा रही है तो ग्रन्थ का पढना शब्दों में ही रह जायेगा। टीकाकार का उद्देश्य है कि पढ़े, मनन करें, पालन करें और रत्नत्रय की वृद्धि करें।

आचार्यश्री ने टीका में रयणसार में जो गाथाएँ विभिन्न छंदों में उल्लिखित हैं उनको छंदों के नाम चपला, सिंहनी, उग्गाहा, गाहा, गाहिणी अनुष्टप छंदों में प्रतिपादित कर महती कार्य किया है जो शोधार्थियों के लिए अत्यन्त लाभदायक होगा।

आचार्यश्री सदैव संयम, अनुशासन पर जोर देते हैं, उसी भाव को गाथा संख्या की टीका में कहते हैं चाहे श्रमण हो या श्रावक हो दोनों ही संयमाचरण के साथ हो तभी सम्यक्त्वाचरण की सार्थकता है। इसका चारित्र प्राभृत की गाथा ९-१० से पुष्ट किया है। आचार्यश्री ने ज्ञानमद को अभिनव नाम 'श्रुतमद' दिया है जो कि वर्तमान के तथाकथित ज्ञानियों के लिये है जिनको लगता है कि मैं ही यथार्थ ज्ञानी हूँ शेष सब अज्ञानी हैं। सम्यग्दृष्टि के विषय में लिखा है कि जो वहिरात्मा है। बहिरात्मा से तात्पर्य जिनेन्द्र भगवान् द्वारा उपदिष्ट पदार्थों में श्रद्धारहित, तीव्र कषायों से आविष्ट देह-आत्मा को एक माने वाला। अरिहन्तादि की भक्ति दर्शन-विशुद्धि के बिना संभव नहीं है इसलिए सम्यग्दृष्टि का 'भक्ति' एक गुण है (गाथा ८)।

स्वाध्याय से ध्यान को अभ्यास में लाना चाहिए और ध्यान से स्वाध्याय को चरितार्थ करना चाहिए क्योंकि इन दोनों की प्राप्ति से परमात्मा स्वानुभव में आता है (गाथा -११) यह कथन वर्तमान में जो ध्यान के नाम पर आडम्बर चल रहा है उसको निवारण करने में मील का पत्थर साबित हो सकता है।

वर्तमान में अनेक संप्रदायों के संतगण कायक्लेश अर्थात् एक पैर पर खड़े रहना, काँटों की शय्या पर लेटना, उपवास करना आदि देखा जा रहा है। इस पर आचार्यश्री ने रयणसार की गाथा ८२ पर टीका करते हुए लिखा है कि सम्यक्त्व के अभाव में 'यह घोर तपस्वी है' इस प्रकार की प्रशंसा प्राप्त होने पर भी कर्म क्षय को नहीं कर पाता है।

आचार्यश्री ने गाथा संदर्भ १५६/१५७ की टीका करते हुए कह रहे हैं कि जितने समय तक आर्त व रौद्र ध्यान रहता है उतने समय तक जीव मुक्ति और सुख को प्राप्त नहीं कर पाता है। ममत्व के कारण भी यह जीव मुक्ति या सुख को प्राप्त नहीं कर पाता है, ममत्व अर्थात् मूर्च्छा, चाहे अजीव स्थान, प्रतिमोपकरण या जीवंत गण-गच्छ हो। वर्तमान में यह श्रावकों को तो छोड़े श्रमणों में भी विशेष रूप से परिलक्षित हो रहा है।

आचार्यश्री ने रत्नत्रय वर्द्धनी टीका में इतने उदाहरण और सूत्र लिखें हैं, उनपर स्वतंत्र ग्रन्थ तैयार हो सकता है। उपर के उदाहरण बानगे मात्र हैं।

आचार्यश्री आर्ष परम्परा के कहर समर्थक हैं इसलिये कुछ परम्परायें जो मृत प्राय थी यथा यति सम्मेलन, युग प्रतिक्रमण, श्रमण-श्रमणी शब्द का प्रयोग आदि को पुर्नजीवित किया है। आचार्यश्री जयवंत हो तथा इसी प्रकार मूल ग्रन्थों पर संस्कृत जो वैदिक परम्परा में देवभाषा कही जाती है, टीकाएं लिखकर माँ जिनवाणी की सेवा के साथ-साथ श्रमण-श्रावकों एवं समस्त जनों को मोक्ष मार्ग पर लगाते रहें। जयवन्त हो आचार्य भगवन इसी मंगल पावनभावना के साथ-

अरिहन्त फर्नीचर्स, भिलाई

आवश्यक सूचना

आजीवन (ग्यारह वर्षीय) एवं त्रिवर्षीय सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता अवधि समाप्त हो गई है या होनेवाली है। अतः सदस्यता नवीनीकरण करा लें जिससे पत्रिका निरन्तर भेजी जा सके।

प्रबन्ध सम्पादक : विरागवाणी

विरागसागर नाम हमें अब प्राणों से भी प्यारा हैं

पं. विजेन्द्र कुमार जैन,(वीरू) देवेन्द्रनगर

आठों याम साधना करके कर्मों का क्षय करते हो,
स्वयं कष्ट सहकर के गुरुवर पीर सभी की हरते हो।
चेहरे की मुस्कान अनूठी देखो कैसा नजारा है,
विराग सागर नाम हमें अब प्राणों से भी प्यारा है।।

हे स्वभाव से इतने कोमल पुष्प सुगंधी फैलाते,
उनकी गंध को पाकर के भौरे भी उन पर मंडराते।
उसको भी चमका दो जो गर्दिश में पडा सितारा है,
विराग सागर नाम हमें अब प्राणों से भी प्यारा है।।

शीतल मिष्ठ सुवासित व्यंजन जीवन-भर ये खाये हैं,
क्षुधा न अब तक शांत हुई भोजन के दास कहाये हैं।
क्षुधा वेदना शांत हो जाए मांग रहा ये बेचारा है,
विराग सागर नाम हमें अब प्राणों से भी प्यारा है।।

दीप जो रखा देहरी पर वह भीतर बाहर करे,
अन्तर्मन का दीप जला दो मेरी बस इतनी सी आश।
केवलज्ञान के दीप से होता तीनों लोक उजियारा है,
विराग सागर नाम हमें अब प्राणों से भी प्यारा है।।

आम अनार सेव और केला उत्तम फलों को लाये हैं,
उत्तम फल को पाने हेतु चरणन तुम्हें चढ़ाये हैं।
मोक्षरूपी फल को पाने का यही एक गलियारा है,
विराग सागर नाम हमें अब प्राणों से भी प्यारा है।।

अष्ट द्रव्य का अर्घ बनाया गुरुवर की करने पूजन,
पूजन का बस एक ही फल हो विरागमय होवे जीवन।
करूणानिधि ने करूणा करके बालक को स्वीकार है,
विराग सागर नाम हमें अब प्राणों से भी प्यारा है।।

ऐसा कोई स्थान नहीं है जहाँ जनम नहीं पाया है,
लाख चौरासी के दु:ख सहके मनुज जनम अब पाया है।
यह जीवन सार्थक हो जाए तुम पें सब कुछ वारा है,
विराग सागर नाम हमें अब प्राणों से भी प्यारा है।।

कुछ तो ऐसे जो चालों में चाल चले ही जाते हैं,
मकडी जैसा जाल बनाकर उसमें ही फस जाते हैं।
बुरा का फल तो बुरा ही होता फिर इसमें क्यों लगारा है,
विराग सागर नाम हमें अब प्राणों से भी प्यारा है।।

द्राक्ष से होवे रोगों का शमन

संकलन- श्रमणी आर्यिका विवक्षाश्री माताजी

द्राक्ष एक प्रकार का श्रेष्ठ कुदरती मेवा है। उत्तम कोटि के फलों में इसकी गणना होती है। यह स्वाद में मधुर होती है।

द्राक्ष दो किस्म की होती है- काली और सफेद। सफेद द्राक्ष ज्यादा मीठी होती है, इसलिए महंगी भी होती है। काली द्राक्ष सभी प्रकृतिवालों को सभी रोगों में लाभप्रद और गुणकारी मानी जाती है। काली द्राक्ष का दवा में अधिक उपयोग होता है।

द्राक्ष गर्म देश के लोगों की भूख और प्यास का शमन करने में खूब उपयोगी होती है। यह पित्त शामक और रक्तवर्धक है। हरी ताजा द्राक्ष अंशत: कफ कारक मानी जाती है। परंतु सेंधा नमक या नमक के साथ खाने से कफ होने का भय नहीं रहता। द्राक्ष बच्चे, युवा, वृद्ध, सगमी और प्रसूता सभी के लिए लाभकारक है।

पुरानी कब्जवाले लोग यदि प्रतिदिन थोड़ी या ज्यादा द्राक्ष खायें तो उन्हें नर्म दस्त आते हैं और कब्जीयत निश्चित रूप से दूर होती है। जिन्हें अर्श-मस्सों की तकलीफ हो वे यदि द्राक्ष का सेवन करें तो, द्राक्ष रेचक होने से, उन्हें नर्म दस्त होते हैं और अर्श की पीड़ा कम होती है।

- ❖ द्राक्ष आंखों के लिए हितकारी है।
- ❖ कच्ची द्राक्ष बहुत कम गुणवाली और भारी होती है। खट्टी द्राक्ष रक्तपित्त करती है। हरी (परिपक्व) द्राक्ष गुरु, खट्टी, उष्ण (गर्म) रक्तपित्तकारक, रूचिकारक, दीपक और षाटानाशक है।
- ❖ काली द्राक्ष शाम में भिगोकर रखिए और दूसरे दिन सुबह उसे मसलकर छील लीजिए। उसमें जीरा की बुलनी और शर्करा डालकर पीने से पित्त का दाह मिटता है।
- ❖ काली द्राक्ष और मुलेठी का काढ़ा बनाकर पीने से तृषारोग मिटता है।
- ❖ हरी द्राक्ष का रस अथवा किसमिस द्राक्ष को पीसकर पानी में मसलकर बनाया हुआ रगड़ा पीने से दाहयुक्त तुषारोग शात होता है।
- ❖ द्राक्ष और सौंफ दो-दो तोला लेकर रात में आधा पौंड पानी में भिगोकर रख दीजिए। प्रात, उसे मसल छानकर उसमें एक तोला शक्कर मिलाकर थोड़े दिनों तक पीने से अम्लपित्त खट्टी डकारें, उबकाई, खट्टी उल्टी, मुँह में छाले पड़ना आमाशय में जलन होना, पेट का भारीपन आदि मिटते हैं।
- ❖ द्राक्ष और धनिया एक-एक तोला पीसकर पानी में एकरस बनाकर पीने से पित्त की उल्टी बंद होती है।
- ❖ द्राक्ष और अडूसे का काढा बनाकर पीने से शूल मिटता है।
- ❖ तीन चार तोला काली द्राक्ष को रात में ठंडे पानी में भिगोकर रखिए सुबह मसलकर छान लीजिए इसे थोडें दिनों तक पीने से कब्ज मिटती है।
- ❖ काली द्राक्ष को राते में ठंडे पानी में भिगोकर प्रात: शक्कर गलाकर पीने से मूत्र कच्छ मिटता है।
- ❖ दो तोला द्राक्ष पर घी लगाकर तब पर सेककर, थोड़ा सेंधा नमक और काली मिर्च का बारीक चूर्ण लगाकर, रोज सुबह सेवन करने से वातप्रकोप दूर होता है और दुर्बलता के कारण यदि सिर चकराता हो तो आराम होता है।
- ❖ किसमिस द्राक्ष दो तोला और छोटी इलायची के दाने दो माशा चटनी की तरह पीसकर, एक पौंड पानी में मिलाकर

इसमें शक्कर डाल छानकर पीने से धूप में धूमने के कारण होनेवाला मूत्रकृच्छ (दर्द के साथ बूंद-बूंद पेशाब होना) का दाह मिटता है और पेशाब साफ आता है।

❖ ४ तोला काली द्राक्ष को शाम को ठंडे पानी में भिगोकर सुबह पीसकर थोड़ा जीरा पाउडर डालकर पीने से पेशाब की गर्मी दूर होती है। पेशाब साफ आता है।

❖ द्राक्ष और उबाले हुए आँवले में गाढ़ा चासनी मिलाकर देने से मूर्च्छारोग में लाभ होता है।

❖ द्राक्ष को गर्म पानी से धोने के बाद ही उसका उपयोग करें ताकि गंदगी या जुंत दूर हो जाये।

यूनानी वैदक के अनुसार द्राक्ष कफ को पतला करके बाहर निकालती है, स्त्रियों के मासिक धर्म को नियमित करती है, कब्जियत दूर करती है, रक्त को बढ़ाती है और मांस को पुष्ट करती है। फेफड़ों, यकृत, मूत्राशय के रोगों को, जीर्ण ज्वर में यह लाभदायक है। इसका रस सिरदर्द उपदंश आदि को मिटाता है। इसके बीज शीतल होते हैं। इसके पत्ते अर्श को मिटाते हैं। इसकी बेल की शाखाएँ मूत्राशय-अंडकोष की सूजन में लाभदायक है। इसकी बेल की भस्म मूत्राशय की पथरी को पिघलाकर निकालने में सहायक है। साथ ही जोड़ों की पीड़ा को दूर करती है और अर्श की सूजन को मिटाती है।

वैज्ञानिक मतानुसार द्राक्ष में विटामिन 'ए', 'बी' और 'सी' लोह तथा शरीर को बल प्रदान करने वाले पौष्टिक द्रव्य है। उपरांत, इसमें पोटेशियम, सेल्यूलोझ शर्करा तथा कार्बोनिक अम्ल है जो कब्जियत दूर करने में सहायक है। द्राक्ष-रस लिवर को शक्ति प्रदान करता है। द्राक्ष में फलशर्करा और काबोहाइड्रेट अधिक मात्रा में पाया जाता है। अत: पौष्टिकता की दृष्टि से अन्य फल की अपेक्षा यह उत्तम है। अत: अपने लिए द्राक्ष का सेवन उचित मात्रा में करना चाहिए।

संकलन- श्रमणी आर्यिका विवक्षाश्री माताजी

सर्वोदया/ रत्नत्रय वर्धिनी टीका

प.पू. आचार्य कुन्दकुन्द देव की महान कृतियाँ बारसाणुपेक्खा एवं रयणसार पर प.पू. राष्ट्रसंत गणाचार्य श्री विरागसागर जी महामुनिराज द्वारा अत्यन्त ही सरल एवं सहज संस्कृत भाषा में हिन्दी अनुवाद सहित अनुपम टीका जो आगम, अध्यात्म एवं सिद्धान्त की प्रमाणिकता से ओत प्रोत, क्रमश: शोध पूर्ण ग्रन्थ, ११०० पृष्ठीय सर्वोदया एवं १३०० पृष्ठीय रत्नत्रय वर्धिनी- दो दो भागों में भारतीय ज्ञान पीठ से प्रकाशित हो चुकी हैं। मंदिर जी, साधु-संघों तथा विद्वानों ने स्वाध्यायार्थ स्वपर ज्ञान वृद्धि हेतु सर्वोदया टीका ४९०/-रूपये प्रत्येक भाग एवं रत्नत्रय वर्धिनी टीका ६५०/- प्रत्येक भाग के मूल्य पर विक्रय हेतु उपलब्ध है-

प्राप्ति स्थान- १. **भारतीय ज्ञान पीठ (विक्रय केन्द्र)**
४४०५/५ अंसारी रोड, दरियागंज नई दिल्ली पिन को. ११०००३
सं.सूत्र श्री संजय दुवे मो. ८५०६८६२९५४ फोन नं. ९१-०११-२३२४१६१९

२. **श्री सम्यग्ज्ञान विराग विद्यापीठ**
चैत्यालय मंदिर बतासा बाजार, भिण्ड (म.प्र.)
सं.सूत्र पं. वीरेन्द्र जैन, भिण्ड मो.९७५४८०३२२०

३. **श्री दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र विरागोदय धर्मधाम,**
पथरिया, जिला- दमोह (म.प्र.)
सं. सूत्र कपिल सिंघई पथरिया, मो. ९८९३७५३२२३

आध्यात्मिक शंका-समाधान

प.पू. गणाचार्य श्री विरागसागर जी महाराज

वर्तमान भौतिक वादी युग में संसारी प्राणी भोगों की अभिलाषाओं की पूर्ति के लिये दिनरात पैसा कमाने में लगा है। जैन कुल में जन्म लेकर भी छः आवश्यक कर्त्तव्यों को भूलता जा रहा है। संस्कारित परिवारों में देवदर्शन पूजन तो फिर भी व्यक्ति करता है पर स्वाध्याय के लिये उसके पास समय नहीं और जो स्वाध्याय भी करते हैं वे आर्ष परम्परा के आचार्य प्रणीत ग्रन्थों का स्वाध्याय या तो करते ही नहीं या करते हैं तो उसके सही अर्थ भावार्थ को न समझ पाने के कारण ये उन लोगों द्वारा कहे जाते हैं जो अपनी पंथ, आम्नाय विचारधारा या ख्याति लाभ प्रशंसा का कारण कुछ का कुछ बताकर भ्रमित कर देते हैं।

प.पू. गणाचार्य श्री विरागसागर जी महाराज ने मोक्षमार्ग में आरूढ़ होकर क्षितिज की ऊँचाईयों को प्राप्त नहीं किया बल्कि वर्तमान समय के सबसे बड़े चतुर्विध संघ के नायक हैं। ज्ञान की असीम गहराईयों में डुबकी लगाकर सर्वोदया, रत्नत्रय वर्धिनी, श्रमण प्रबोधनी, श्रमण सम्बोधनी आदि संस्कृत टीकाओं के अलावा १५० से भी अधिक आलेखों द्वारा जन मानस के कल्याण के लिये जिनागम को दुर्लभ रत्न प्रदान किये हैं। चारों अनुयोगों को समझाने हेतु जन सामान्य की शंकाओं के समाधान हेतु क्रमिक प्रस्तुति-

शंका- तो फिर ज्ञान आठ और ज्ञानावरण कर्म के पांच भेद क्यों कहे ?

समाधान- मति, श्रुत आदि ज्ञानावरण कर्म का क्षयोपशम मिथ्यादृष्टि व सम्यग्दृष्टि को समान रूप से होने पर भी सम्यग्दृष्टि का ज्ञान मति, श्रुत आदि रूप है और मिथ्यादृष्टि का ज्ञान कुमति, कुश्रुत रूप है। अज्ञान भाव है।

शंका - ऐसे कैसे ?

समाधान- सम्यग्दृष्टि जीव ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से परमार्थ को सिद्ध करता है जब कि मिथ्यादृष्टि संसार की सिद्धि करता है संसार वर्धक कार्यों में ही निरंतर संलग्न रहता है।

शंका- जैसे आप ज्ञान में मिथ्यापना या सम्यक्पना कहते है वैसा ज्ञानावरण में भी क्यों नहीं कहते हैं ?

समाधान - जो आगम में है वही तो हम कहेंगे, आगम से बाहर का या आगम विरुद्ध तो नहीं कहेंगे।

शंका - क्या वीतराग निर्विकल्प स्वसंवेदन ज्ञान मात्र मुनियों को ही होता है ?

समाधान -हाँ, मात्र अभेद निश्चय वीतराग निर्विकल्प समाधि में स्थित मुनियों को ही होता है कहा भी है **(त.अ.गा.१६१)** में

वेद्यत्त्वं वेदकत्वं च यत् स्वस्य स्वेन योगिनः।
तत्स्व संवेदनं प्राहुरात्मनोऽनुभवं दृशम्।।

अर्थ- स्वसंवदेन, आत्मा के उस साक्षात् दर्शन रूप अनुभव का नाम है। जिसमें योग अपने ही द्वारा अपनी आत्मा का ज्ञेय तथा ज्ञायक भाव को प्राप्त होता है।

और भी देखिये **(स.सा.गा. ३८२ क. २२३)**

रागद्वेषविभावमुक्तमहसो नित्यं स्वभावस्पृशः,
पूर्वगामिसमस्तकर्मविकला भिन्नास्तदात्वोदयात्।
दूरारूढ़चरित्रिवैभवबलाच्चञ्चच्चिदर्चिर्मयीं,
विंदन्ति स्वरसाभिषिक्त भुवनां ज्ञानस्य संचेतनाम्।।

अर्थ- जिनका तेज राग-द्वेष रूपी विभाव से रहित है, जो सदा स्वभाव को स्पर्श करने वाले हैं, जो भूतकाल के तथा भविष्य काल के समस्त कर्मों से रहित है और जो वर्तमान काल के कर्मोदय से भिन्न है, वे ज्ञानी अति प्रबल चारित्र के वैभव के बल से ज्ञान की संचेतना का अनुभव करते है जो ज्ञान चेतना चमकती हुई चैतन्य ज्योतिमय है और जिसने अपने रस से

समस्त लोगों को सींचा है। (विशेष देखें २२८ से २४० शंका समाधान में)

शंका- वीतराग स्वसंवेदन ज्ञान के पर्यायवाची नाम कौन कौन से है ?

समाधान- भावश्रुतज्ञान, निश्चयश्रुतज्ञान, वीतराग स्वसंवेदन, वीतराग, निर्विकल्प स्वसंवेदन, अभेदरत्नत्रय आत्मग्राहक भावश्रुतज्ञान, निश्चयज्ञान, शुद्धात्मभिमुख, स्वसंवित्ति, आत्मानुभव (त.अ.१६१) चेतना, अनुभूति, उपलब्धि, वेदना (**चेतनानुभूत्युत्युपसलब्धिवेदनानामेकार्थत्त्वात्**) (**पं.का./ता.वृ./९९/१५९**)

अर्थ- स्वसंवेदन ज्ञान रूप से आत्मग्राहक भावश्रुतज्ञान है वह प्रत्यक्ष है और जो बारह अंग, चौदह पूर्व रुप परमागम नाम वाला ज्ञान है वह मूर्त, अमूर्त व उभय रूप अर्थों के जानने के विषय में अनुमान ज्ञान के रूप में परोक्ष होता हुआ भी केवलज्ञान सदृश है।

देव दर्शन विधि पूर्वक करना

१. अपने आराध्य पञ्च परमेष्ठी ही सच्चे देव हैं ऐसा अटल विश्वास होना चाहिए।
२. प्रदर्शन की अपेक्षा प्रभु-दर्शन का अधिक महत्व है।
३. भगवान के दर्शन मात्र से दैविक शक्तियाँ आकर हमें शक्तिशाली बनाती है।
४. भगवत् दर्शन कभी भी खाली हाथ से नहीं करना चाहिए अपितु जल, चंदन, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप, धूप या फल चढ़ाकर करना चाहिए।
५. भगवत् दर्शन के लिए नंगे पैर जिनालय या मंदिर जाना चाहिए।
६. मंदिर में प्रवेश के पूर्व अपने पैर धोना चाहिए।
७. ऊँ जय-जय-जय बोलते हुए तीन बार घण्टा बजाना चाहिए।
८. नि:सहि, नि:सहि, नि:सहि नमोऽस्तु, नमोऽस्तु, नमोऽस्तु बोलते हुए अंदर प्रवेश करना चाहिए।
९. सर्वप्रथम भगवान की तीन प्रदशिणा दे, ५ ढ़ेरी से साथ में लाये हुए मंगल द्रव्य चढ़ाकर सिर जमीन में टेकते हुए अष्टांग या पंचाग नमस्कार करना चाहिए।
१०. स्त्रियों और बालिकाओं को गवासन (गो आसन) से ही नमस्कार करना चाहिए।
११. पश्चात् प्रभु को अपलक निहारते हुए कोई भी स्तुति, विनती या प्रार्थना करना चाहिए।
१२. यदि भूल से कोई अविनय हो गई हो तो दण्ड स्वरूप खड़े होकर ९ बार महामंत्र का जाप करना चाहिए।
१३. पश्चात् यथावसर अभिषेक, पूजन, जाप व स्वाध्याय करना चाहिए।
१४. यदि वहाँ शास्त्र या गुरु हों तो उन्हें भी क्रमश: ४ व ३ ढ़ेरी से द्रव्य चढ़ाकर नमस्कार करना चाहिए।
१५. यदि प्रवचन सुनने का सौभाग्य मिल तो उसे अवश्य सुनना चाहिए।
१६. लौटते समय भावना भाना चाहिये कि भूयात् पुनर्दर्शनम्।
१७. मन्दिर जी से लौटते समय अ:सही, अ:सही, अ:सही, बोलना चाहिए।

संस्कार सुरभि से साभार

प.पू. आचार्य रत्न, चर्या चूड़ामणी राष्ट्रसंत गणाचार्य श्री विरागसागर जी महामुनिराज ससंघ के परिचय फोटो एवं अन्य जानकारी हेतु-

1. www.ganacharyaviragsagar.com
2. Facebook : viragvani
3. Email : viragsagarji@gmail.com
4. youtube : Ganacharya Viragsagarji
5. सं. सूत्र what'sapp no 9009462216

दिसम्बर माह के महोत्सव दिवस

जन्म/दीक्षा/पुण्यतिथि	तारीख	स्थान /नाम
दीक्षा दिवस	२.१२.२००९	श्रमणी आ. ज्ञेयश्री माताजी
जन्म दिवस	२.१२.१९७९	भिण्ड, श्रमणी आ. विदिताश्री माताजी
पुण्य तिथि	२.१२.२०१६	उदी (उ.प्र.), श्रमण श्री विश्व कुन्दसागर जी
दीक्षा दिवस	५.१२.१९९७	भिण्ड, क्षुल्लक दीक्षा श्री विश्वलोचनसागर जी
ऐलक दीक्षा दिवस	७.१२.१९५१	सोनागिर, प.पू. आचार्य श्री विरागसागर जी महामुनिराज
मुनि दीक्षा दिवस	९.१२.१९८३	औरंगाबाद, प.पू. गणाचार्य श्री विरागसागर जी महामुनिराज
जन्म दिवस	९.१२.१९९४	लोहारिया, श्रमणी आ. विगुञ्जन श्री माता जी
जन्म दिवस	१०.१२.१९९१	अम्बाला, श्रमण श्री विकौशल सागर जी महाराज
जन्म दिवस	१०.१२.१९५६	गोटेगाँव, श्रमण श्री विहित सागर जी महाराज
जन्म दिवस	११.१२.१९७९	हरदुआ, श्रमणी आ. विशिष्टश्री माता जी
पुण्य तिथि	११.१२.१९८१	नागपुर, श्रमणी आ. विधानश्री माता जी
जन्म दिवस	१२.१२.१९८१	सतगुवां, श्रमण श्री विरंजन सागर जी महाराज
पुण्य तिथि	१२.१२.२०१७	जनकपुरी, श्रमण श्री विश्वपूज्य सागर जी महाराज
पुण्य तिथि	१३.१२.२०१७	जनकपुरी, श्रमण श्री विश्वस्त सागर जी महाराज
मुनि दीक्षा दिवस	१४.१२.१९९८	वरासो (भिण्ड), श्रमणाचार्य विभवसागर जी श्रमणाचार्य श्री विर्मशसागर जी, मुनिश्री विहर्षसागर जी, श्रमणाचार्य विनिश्चय सागर जी, मुनिश्री विहित सागर जी, श्रमणाचार्य श्री विमद सागर जी, मुनि विश्वयज्ञसागर जी, मुनिश्री विश्वलोचन सागर जी, मुनिश्री विश्ववीर सागर जी।
पुण्य तिथि	१४.१२.२०००	सम्मेद शिखर जी, मुनिश्री विश्वधैर्य सागर जी
पुण्य तिथि	१६.१२.१९९५	ललितपुर, क्षुल्लिका विसर्जन श्री माता जी
पुण्य तिथि	१८.१२.२०१२	जयपुर, मुनिश्री विश्वाक्षसागर जी
क्षुल्लक दीक्षा	२२.१२.१९६९	धदिला (महा.) पू.आ. महावीर कीर्ति जी महाराज
पुण्य तिथि	१९.१२.२०१८	दरगुवां (म.प्र.), श्रमण श्री विश्वदृष्टा सागर जी
पुण्य तिथि	२३.१२.२००९	हिम्मतनगर (गुज.), श्रमण श्री विश्वविभूसागर जी
पुण्य तिथि	२४.१२.२०१०	कोल्हापुर (महा.), पू.आ.श्री सन्मति सागर जी महाराज
जन्म दिवस	२७.१२.१९७६	बड़ामलहारा, श्रमणी आ. विशाखाश्री माता जी
पुण्य तिथि	२९.१२.१९९४	शिखर जी, प.पू. आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज
पुण्य तिथि	२९.१२.१९९४	सागर (म.प्र.) मुनिश्री विसर्गसागर जी
पुण्य तिथि	३०.१२.२०१३	त्योंदा (म.प्र.) मुनिश्री विश्वशील सागर जी महाराज
जन्म दिवस	३१.१२.१९३८	कुथी (म.प्र.) आ.श्री विशदसागर जी महाराज

मार्गशीर्ष माह के व्रत एवं कल्याणक महोत्सव

१४ नवम्बर २०१९	मार्गशीर्ष कृष्ण २	रोहिणी व्रत
२० नवम्बर २०१९	मार्गशीर्ष कृष्ण ८	अष्टमी व्रत
२२ नवम्बर २०१९	मार्गशीर्ष कृष्ण १०	श्री भगवान महावीर स्वामी जी ज्ञान कल्याणक
२५ नवम्बर २०१९	मार्गशीर्ष कृष्ण १४	चतुर्दशी व्रत
१७ नवम्बर २०१९	मार्गशीर्ष शुक्ल १	श्री पुष्पदंत जी जन्म तप कल्याण
४ दिसम्बर २०१९	मार्गशीर्ष शुक्ल ८	अष्टमी व्रत
६ दिसम्बर २०१९	मार्गशीर्ष शुक्ल १०	श्री अरहनाथ जी तप कल्याणक
७ दिसम्बर २०१९	मार्गशीर्ष शुक्ल ११	श्री मल्लिनाथ जन्म तप, श्री नमिनाथ ज्ञान कल्याणक
११ दिसम्बर २०१९	मार्गशीर्ष शुक्ल १४	चतुर्दशी व्रत, श्री अरहनाथ जी जन्म रोहणी व्रत
१२ दिसम्बर २०१९	मार्गशीर्ष शुक्ल १५	श्री संभवनाथ जी तप कल्याणक

श्री विराग सम्यक्ज्ञान शिक्षण शिविर वेलगछिया कलकता

(परीक्षा परिणाम)

गोम्मट सार कर्म काण्ड-

१.	श्रीमती अनिता दगड़ा श्री राकेश दगड़ा, वंगवासी	50/50
२.	श्रीमती प्रीति पाटनी श्री मनीषकुमार पाटनी, काकुडगाछी	50/49½
३.	श्रीमती सन्तोष काला श्री अशोक जी काला	50/49½
४.	श्रीमती बवीता पाण्डया श्री वीरेन्द्र कुमार पाण्डया, बड़ा बाजार	50/49½
५.	श्रीमती सरिता काशलीवाल श्री तेजराज काशलीवाल काकुड़ गाधी	50/49
६.	श्रीमती किरण गंगवाल श्री कमल जी गंगवाल, डवसन रोड हावडा	50/49
७.	श्रीमती मन्जू सेठी श्री सन्तोष जी सेठी, वंगवासी	50/49
८.	श्रीमान अनुपम जैन, डॉ प्रवीण जैन, काकुड गाछी	50/48½
९.	श्रीमती सुमन बडजात्या श्री संजय बड़जात्या बेलगछिया	50/48
१०.	श्रीमती निर्मला जैन श्री धर्म चन्द्र कासलीवाल, काकड गाछी	50/48
११.	श्रीमती सरला पाटनी श्री सुरेश जी पाटनी, बड़ा मंदिर जी	50/48
१२.	श्री संगीता पाटोदी श्री महेन्द्र कुमार पाटोदी, काकुड़ गाछी	50/47½
१३.	श्रीमती मीना छावडा श्री महेन्द्र कुमार छावडा, काकुड गाछी	50/47
१४.	श्रीमती संगीता गंगवाल श्री दिनेश कुमार गंगवाल, वड़ा बाजार	50/46½
१५.	श्रीमती रीतू जैन, श्री संजय कुमार जैन, काकुड गाछी	50/46½
१६.	श्रीमती संगीता पाटनी श्री संदीप पाटनी, काकुड गाछी	50/46½
१७.	श्रीमती कुसुम छावडा श्री सम्पत जी छावड़ा, चौरंगी मंदिर	50/46
१८.	श्रीमती इन्द्रमणी वडजात्या श्री प्रकाश चन्द्र बड़जात्या बेलगछिया	50/45½
१९.	श्रीमती ममता सेठी श्री अशोक सेठी, कोलकत्ता	50/45½
२०.	श्रीमती ववित गंगवाल श्री राजेश कुमार गंगवाल,	50/45
२१.	श्रीमती मंज पाटनी, श्री रमेश कुमार पाटनी चौरंगी	50/45
२२.	श्रीमती स्नेहलता जैन, श्री अशोक कुमार जैन वंगवासी	50/45
२३.	श्रीमती सुधा जैन श्री मेहश चन्द्र जैन, दमदम	50/44½
२४.	श्रीमती अनीता पाटनी, श्री संजय पाटनी दमदम	50/44½
२५.	श्रीमती निर्मला पाटनी श्री सन्तोष कुमार पाटनी वंगवासी	50/44½
२६.	श्रीमती नीतू जैन- श्री राकेश जैन, बेलगछिया	50/44½
२७.	श्रीमती नीलम ढोल्या, श्री प्रदीप कुमार ढोल्या, बड़ा मंदिर	50/44½
२८.	कु. रंगोली जैन, श्री जिनेन्द्र जैन वेलगछिया	50/44½
२९.	श्रीमती अरूणा जैन, श्री अशोक काला, वंगवासी	50/44
३०.	श्रीमती सरोज जैन श्री वीरेन्द्र कुमार जैन, वेलगछिया	50/43½
३१.	श्रीमती सरिता सेठी, बड़ा मंदिर	50/43
३२.	श्रीमती रूचि बडजात्या श्री विवेक जैन, वंगवासी	50/41½
३३.	श्री रतनलाल गंगवाल श्री शांतिलाल गंगवाल, वंगवासी	50/41½

३४.	श्रीमती पुष्पा लुहाडिया, बड़ा मंदिर	50/41
३५.	श्रीमती शशि पाटनी वेलगछिया	50/41
३६.	श्रीमती हेमा जैन श्री अशोक जैन, काकुड़ गाछी	50/39½
३७.	श्रीमती सन्तोष देवी श्री कमल कुमार लुहाडिया, शिवतला स्ट्रीट	50/39
३८.	श्री वसंत कुमार पाटनी श्री फूल चन्द्र पाटनी, वंगवासी	50/37½
३९.	श्री अशोक कुमार काला श्री केशरीमल जी काला, वंगवासी	50/36½
४०.	श्रीमती रश्मि जैन स्व श्री अशोक जैन, काकुड गाछी	50/35½
४१.	श्रीमती रचना पाण्डया श्री हेमन्त पाण्डया, कोलकाता	50/35½
४२.	श्रीमती सुजाता जैन श्री नवीन कुमार जैन, श्याम बाजार	50/34½
४३.	श्रीमती पुष्पा जैन श्री सरेन जैन बड़ा बाजार	50/35
४४.	श्री रवीन्द्र कुमार जैन, श्री भागचन्द्र जैन, गौरीवाडी	50/33½
४५.	श्रीमती अल्का गोधा श्री रविकुमार गोधा, लेकटाउन	50/26½
४६.	श्रीमती कविता जैन श्री अनिल जैन, वेलगछिया	50/26
४७.	श्री सुखराज जैन श्री नवरतन जैन, काकुड़ गाछी	50/23½
४८.	श्री अशोक कुमार जैन, स्व.श्री वीरेन्द्र कुमार जैन हावड़ा	50/21½
४९.	श्रीमती रेखा जैन श्री संजय जैन वंगवासी	50/20½
५०.	श्री सुधीर कुमार चूडीवाल स्व चेतन दास चाडीवाल लेकटाइन	50/19
५१.	श्रीमती शशि जैन श्री पवन कुमार जैन, कलकत्ता	50/17
५२.	श्री राजकुमार जैन स्व. नथमल जैन, दमदम	50/17
५३.	श्री विकास कुमार जैन, श्री रतनलाल जैन, वंगवासी	50/17

चौबीस ठाणा

१.	श्रीमती सुनयना जैन श्री सरोज कुमार जैन, शोभाराम वैशारूस्ट्रीट	50/49½
२.	श्रीमती स्नेहा जैन, श्री राजेश जैन, अवनी आक्स फोर्ट	50/49½
३.	श्रीमती पिंकी पहाडिया श्री संजीव पहाडिया अवनी आक्स फोर्ट	50/49
४.	अम्बिका ठोल्या श्री पदम जी ठोल्या वांगुड ब्लाक	50/49
५.	श्रीमती सुलेखा जैन श्री दीपक जैन, वेलगछिया	50/49
६.	श्रीमती निरंजना शाह, अहमदाबाद	50/48
७.	श्रीमती अन्जू जैन श्री अनिल जैन अवनी आक्स फोर्ड	50/47½
८.	श्रीमती रीतिका गोधा श्री राकेश जैन गोधा लेकटाउन	50/48
९.	श्रीमती पुष्पा पाण्डया श्री राजेन्द्र जी पाण्डया काकुड गाछी	50/46
१०.	विनीत जैन श्री आनन्द जैन,	50/46
११.	श्रीमती खुशबू पाटनी श्री नवीन पाटनी वेलगछिया	50/42
१२.	श्रीमती अंजना शाह श्री पी शाह अहमदाबाद	50/39
१३.	श्रीमती अन्नू पाटनी श्री अरविन्द पाटनी चाइना मंदिर गली	50/35
१४.	श्रीमती शिल्पी वाकलीवाल श्री सत्येन्द्र वाकलीवाल	50/32
१५.	श्रीमती कनक कासलीवाल श्री देवेन्द्र कासलीवाल	50/29½

१६. श्रीमती सुनीता जैन श्री अमित जैन वी.एस.लेन 50/27½
१७. श्रीमती जयश्री जैन श्री पवन जैन बड़ा बाजार 50/26½
१८. श्रीमती शशि कासलीवाल श्री भानु प्रकाश जैन, डवसन 50/25
१९. श्री दीपक पाटनी श्री ऋषभ चन्द्र पाटनी, दमदम 50/24
२०. श्रीमती गुणमाला देवी श्री नथमल पाटनी, डायमण्ड सिटी 50/21½

तत्त्वार्थ सूत्र-

१. श्रीमती प्रियंका जैन 100/100
२. श्रीमती शशि गोधा 100/100
३. श्रीमती शालू जैन 100/98
४. श्रीमती नीरू जैन 100/98
५. श्रीमती संगीता जैन 100/94
६. श्रीमती राजूदेवी जैन 100/80
७. श्रीमती सुधा जैन 100/75
८. श्रीमती निरूपा जैन 100/72
९. श्री मनीष जी सेठी 100/70
१०. श्री शुभम पाटनी 100/66
११. श्री रिंकू जैन 100/64
१२. श्रीमती नीलम जैन 100/44
१३. श्रीमती सीमा जैन 100/40
१४. श्रीमान सुनील सेठी

बाल विज्ञान

१. कु. तपस्या जैन अजय कुमार जैन, दमदम 50/50
२. कु. विधि जैन अजय कुमार जैन, दमदम 50/48
३. कु. वेदिका जैन रोहित कुमार जैन, श्याम बाजार 50/46
४. श्री अनुज जैन श्री राहुल जैन माणिक तल्का 50/46
५. कु. कृष्टी जैन श्री राहुल जैन श्याम बाजार 50/46
६. कु. देशना जैन श्री राहुल जैन, श्याम बाजार 50/38
७. कु. विधि जैन अजित जैन बड़ा बाजार 50/37
८. श्री अग्रिम जैन श्री राहुल जैन माणिक तल्का 50/34
९. श्री दक्ष जैन श्री विकाश जैन हाथी 50/34
१०. कु. चेष्टा जैन श्री नितिन जैन 50/29
११. श्री आराधक जैन श्री अभिषेक जैन श्याम बाजार 50/28
१२. श्री कैवल्य जैन श्री रविन्द जैन पाटनी वेलगछिया 50/28
१३. कु. आन्या जैन श्री मनीष कुमार जैन दमदम 50/26
१४. श्री उत्कर्ष जैन श्री नितिन जैन दागुड 50/17
१५. श्री अभिजैन श्री सिद्धार्थ जैन 50/17
१६. कु. अक्षिता जैन श्री राहुल जैन श्याम बाजार 50/17

समाचार

भव्य जैनेश्वरी दीक्षाएँ सम्पन्न

१३ अक्टूबर २०१९ को श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन उपवन मंदिर वेलगछिया कलकता के विशाल प्रागण में चर्या चूड़ामणि आध्यात्म योगी युग प्रतिक्रमण प्रवर्तक दीक्षा सिद्ध हस्त प.पू. गणाचार्य श्री विरागसागर जी महामुनिराज के पावन कर कमलों से पू. आचार्य श्री सुवलसागर जी महाराज ससंघ पू. मुनि श्री सुपार्श्वसागर जी महाराज ससंघ की उपस्थिति में ४ मुमुक्षुओं के भव्य जैनेश्वरी दीक्षा प्रदान की गई।

दीक्षा समारोह के त्रिदिवसीय कार्यक्रम में दिनांक ११ अक्टूबर को दीक्षार्थियों की मेहदी रस्म की गई साथ ही प.पू. गणाचार्य श्री विरागसागर जी महामुनिराज के जीव पर आधारित फिल्म **श्रमण संस्कृति उन्नायक** एवं प्रसिद्ध संगीतकार श्री रामकुमार एण्ड पार्टी भोपाल द्वारा भजन संध्या की प्रस्तुति दी गई।

१२ अक्टूबर को दीक्षार्थियों की विनौली, आहारचार्य की पूर्वाभ्यास विधि एवं दीक्षार्थिओं द्वारा श्री गणधर वलय विधान प्रभावना पूर्वक सम्पन्न किया गया।

१३ अक्टूबर को प्रात: ४ बजे से दीक्षार्थियों की केशलोंच विधि प्रात: ६ बजे मंगल स्थान ६.३० बजे श्री जी की अभिषेक शान्तिधारा पूजन ११ बजे भव्य शोभा यात्रा के पश्चात् ११.३० बजे से दीक्षा महोत्सव प्रारंभ हुआ। भक्ति नृत्य की प्रस्तुति के साथ बालिकाओं द्वारा मंगलाचरण किया गया। परम्पराचार्यों के चित्रो का अनावरण श्री राजकुमार जी, मनोज जी, संतोष जी वगडा परिवार द्वारा दीप प्रज्जवल श्री प्रदीप जी जैन कानुपर, श्री नरेन्द्र जी जैन रायपुर द्वारा किया गया। आयोजन समिति श्री दिगम्बर जैन मुनिसंघ व्यवस्था समिति, उप समिति द्वारा प.पू. गणाचार्य श्री को श्रीफल भेंट कर दीक्षा विधि प्रारंभ करने हेतु निवेदन किया गया। साथ ही प.पू. गणाचार्य श्री के प्रवचनों पर आधारित 'सिद्धों का खजाना' एवं 'आओ घर को स्वर्ग बनाये' पुस्तक का विमोचन किया गया। श्री सन्तोष जी सेठी द्वारा पू. गणाचार्य श्री नवीन सिहांसन भेंट किया गया। तत्पश्चात् बा.ब्र.श्री धन्यकुमार भैया सलेहा जिला-पन्ना एवं ब्र. श्री महेश भैया, ग्वालियर द्वारा प.पू. गणाचार्य गुरुदेव श्री विरागसागर जी महाराज , मुनि, आर्यिका आदि समस्त संघ अपने परिवार जन पुरजन उपस्थित जन समूह सहित प्राणी मात्र से क्षमायाचना, क्षमादान करते हुए अपनी आत्म कल्याण कर मोक्ष की प्राप्ति हेतु प.पू. गुरुदेव श्री विरागसागर जी महामुनिराज के चरणों में दीक्षा हेतु निवेदन कर श्री फल भेंट किया।

तत्पश्चात् प.पू. गणाचार्य श्री द्वारा पू. आचार्य श्री सुवलसागर जी पू. मुनि श्री सुपार्श्वसागर जी संघस्थ सभी साधु साध्वियों, दीक्षार्थिओं के परिवार जन उपस्थित अपार जन समुदाय से स्वीकृति प्राप्त कर दीक्षा विधि प्रारंभ की। बा.ब्र. श्री विशल्य भारती भैया, बा.ब्र. श्री प्रदीप भैया, बा.ब्र. श्री धन्य कुमार भैया को मुनि दीक्षा के एवं ब्र.श्री महेश भैया को क्षुल्लक दीक्षा देकर क्रमश: श्रमण श्री विशल्य सागर जी, मुनिराज श्रमण श्री विनिबोध सागर जी मुनिराज श्रमण श्री विनिशोध सागर जी मुनिराज एवं क्षुल्लक श्री विश्वमार्दव सागर जी के नाम संस्कार किये। दीक्षार्थिओं के धर्म के माता-पिता बनने का सौभाग्य क्रमश: प्रो.श्री एन.सी.जैन भोपाल, श्री दिलीप कुमार श्रीमती मुन्नीदेवी जी कलकता, श्री तेजपाल जी श्रीमती पुष्पादेवी गंगवाल वारसोई विहार एवं श्री इन्दरचन्द्र पाटनी रीचडा वालो को प्राप्त हुआ। मुनिश्री विशल्यसागर जीको श्री नेमीचन्द्र प्रवीण कुमार जी बज को पिच्छी भेंट करने का श्री दिगम्बर जैन मुनि संघ व्यवस्था समिति कोलकता को कमण्डल तथा श्री पवन जी मोदी को शास्त्र भेंट करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मुनि श्री विनिबोध सागर जी पिच्छी श्री कैलाश चन्द्र जी श्रीमती कनक माला जी, कमण्डल श्री राजकुमार जी रविकुमार जी श्री विवेक कुमार जी शास्त्र श्री रमेश कुमार जी, अनिल कुमार जी ने भेंट किया, मुनिश्री विनिशोध सागर जी को पिच्छी श्री इन्द्र चन्द्र जी श्रीमती कमलादेवी राजेश जी राकेश जी द्वारा कमण्डल श्री सुमेर मल जी चूडीवाल द्वारा शास्त्र श्री गजराज जी कासलीवाल द्वारा क्षुल्लक श्री विश्व मार्दव सागर जी को पिच्छी श्री सुमेरमल जी चूड़ीवाल कमण्डल, श्री विमल सागर जी वात्सल्य धाम जनकल्याण ट्रस्ट को शास्त्र, श्री धर्म चन्द्र संजय कुमार जी सेठी एवं वस्त्र श्री कैलाश चंद बडजात्या एवं श्री प्रदीप जैन श्रीमती सरला जैन कानपुर की ओर से कटोरा भेंट किया गया।

दीक्षार्थिओं का परिचय-

१. श्रमण श्री विशल्य सागर जी

नाम	–	बा.ब्र. श्री विशल्य भारती भैया
निवासी	–	बमीठा जिला- छतरपुर म.प्र.
जन्म	–	५ जून १९७७ बमीठा
शिक्षा	–	इन्टर
जाति-गोत्र	–	परिवार जैन
माता-पिता	–	श्रीमती लक्ष्मी देवी जैन, श्रीमान माणक चन्द्र जी जैन
परिवार	–	भाई ३, बहिन २
वैराग्य का कारण	–	प.पू. गुरुदेव का वात्सल्य एवं संसार से उदासीनता
ब्रह्मचर्य व्रत	–	१९९३ श्रेयांस गिरि में

२. श्रमण श्री विनिबोध सागर जी

नाम	–	बा.ब्र. प्रदीप भैया
निवासी	–	इन्दौर, म.प्र.
जन्म	–	१५ अक्टूबर १९८८ सीरोन कला जिला-ललितपुर उ.प्र.
शिक्षा	–	एम.बी.ए., अध्ययनरत
व्यवसाय	–	मार्केटिंग एण्ड मन्यूफेक्चरिंग
जाति-गोत्र	–	परिवार जैन
माता-पिता	–	स्व.श्रीमती मुन्नी जैन, श्रीमान पदमचन्द्र जी जैन
परिवार	–	भाई १, बहिन १
वैराग्य का कारण	–	संसारिक छल कपट
ब्रह्मचर्य व्रत	–	६ जुलाई २०१९ विपुला चल पर्वत
प्रतिमा व्रत	–	७ नवम्बर २०१८, श्री सम्मेद शिखर जी

३. श्रमण श्री विनिशोध सागर जी

नाम	–	बा.ब्र.धन्य कुमार भैया
निवासी	–	सलेहा जिला-पन्ना म.प्र.
जन्म	–	२३ अक्टूबर १९८४ सलेहा
शिक्षा	–	इन्टर
जाति	–	परिवार जैन, वांझल
माता-पिता	–	श्रीमती अंगूरी देवी जैन, श्रीमान प्रकाश चन्द्र जी जैन
परिवार	–	भाई २, बहिन १
वैराग्य का कारण	–	पू. गुरुदेव का वात्सल्य
ब्रह्मचर्य व्रत	–	१५ मार्च २०१५, श्रेयांसगिरि

४. क्षुल्लक श्री विश्व मार्दव सागर जी

नाम	–	ब्र.श्री महेश भैया
निवासी	–	ग्वालियर
जन्म	–	११सितम्बर १९५४ ग्वालियर
शिक्षा	–	बी.ए.
जाति	–	अग्रवाल, गर्ग
माता-पिता	–	स्व.श्रीमती सावित्रीदेवी स्व.श्री पूनमचंद जी जैन
परिवार	–	धर्म पत्नी श्रीमती मंजू जैन, पुत्र १, पुत्री १
प्रतिमा व्रत	–	२०१३ में ७ प्रतिमा काकोरी में

विमोचन – प.पू. गणाचार्य श्री के प्रवचनों पर आधारित पुस्तक– १. सिद्धो का खजाना, २. आओ घर को स्वर्ग बनाएँ, का विमोचन आयोजन समिति के पदाधिकारियों द्वारा।

प.पू. गणाचार्य श्री द्वारा रचित प्राकृत भक्तियाँ श्रमणी आ. विश्वास श्री माताजी के स्वर की पेन ड्राइव, नवोदित तीर्थक्षेत्र विरागोदय धर्म धाम के फोल्डर का विमोचन प्रति श्री कमल कुमार जी द्वारा, श्री सन्तोष जी सेठी वंगवासी कोलकता द्वारा पूज्य गणाचार्य श्री के लिये नवीन सिंहासन भेंट किया।

कार्यक्रम में गौरवमयी उपस्थिति– दीक्षा महोत्सव के कार्यक्रम श्री जियासुदीन मौला अल्पसंख्यक विभाग के मंत्री पंचगाल सरकार श्री मुखत्तार अली सेक्रेट्री– श्री पवन जी वेनर्जी (मुख्य मंत्री ममता वेनर्जी के भाई) प्रतिनिधि के रूप में, बैलूरमठ के स्वामी उत्तमानन्द जी, गुरुद्वारा के प्रधान मुक्खी सरदार बलजीत सिंह जी क्रिश्चिन समाज के फादर संजीव जी पधारे जिन्होंने पू. गणाचार्य श्री को श्रीफल भेंट कर आशीर्वाद एवं साहित्य ग्रहण किया।

पिच्छी एवं शास्त्र भेंट– पू. श्रमणाचार्य श्री विनिश्चय सागर जी महाराज द्वारा ललितपुर (उ.प्र.) से पू. गणाचार्य श्री के लिये भेजी गई पिच्छी एवं शास्त्र ब्रह्मचारिणी दीदीओं द्वारा भेंट किया गया।

निवाई (राजस्थान) से पू. गणाचार्य श्री विभवसागर जी महाराज द्वारा पू. गणाचार्य श्री को भेजी गई पिच्छी एवं शास्त्र बा.ब्र. अभिनन्दन भैया एवं ब्रह्मचारिणी दीदीओं द्वारा भेंट किया।

अलवर (राजस्थान) से श्रमणाचार्य श्री विनम्रसागर जी महाराज द्वारा पू. गणाचार्य श्री के लिये भेजी गई पिच्छी एवं शास्त्र ब्रह्मचारिणी दीदीओं द्वारा पू. गणाचार्य श्री को भेंट किया गया।

सिद्धचक्र मण्डल विधान हेतु श्री फल भेंट– अष्टान्हिका पर्व पर पू. आ.श्री सुवलसागर जी महाराज की प्रेरणा से कलकता में आयोजित मण्डलीय श्री सिद्धचक्र मण्डल विधान में सान्निध्यता हेतु निवेदन के साथ श्रीफल चढ़ाया गया।

मंगलमयी उद्‌बोधन– पू. आचार्य श्री सुवलसागर जी महाराज द्वारा उपस्थित जन सैलाव को अपना मंगलमयी उद्‌बोधन दिया। अन्त में प.पू. गणाचार्य श्री विरागसागर जी महामुनिराज ने अपने मंगलमयी धर्मोपदेश के साथ स्थानीय एवं वाहर के अनेकों स्थान से आये श्रद्धालुओं को अपना मंगल आशीर्वाद प्रदान किया।

सीधा प्रसारण हुआ– प.पू. गणाचार्य श्री विरागसागर जी महामुनिराज द्वारा दी गई दीक्षा समारोह में अथाह जन समुदाय की उपस्थिति कलकता के एतिहासिक रही कार्यक्रम का प्रसारण जिनवाणी, पारस चैनल तथा विरागवाणी यूटयूव चेनल पर सीधा प्रसारण किया गया।

अन्य स्थानों पर दीक्षाएँ– ३० सितम्बर २०१९ को अलवर (राजस्थान) में प.पू. गणाचार्य श्री के प्रियाग शिष्य श्रमणाचार्य श्री विनम्रसागर जी महाराज द्वारा ऐलक श्री विनुतसागर जी को मुनि श्री विनुत सागर जी क्षुल्लक श्री विश्वकुन्द सागर जी को ऐलक विश्वकुन्द सागर जी, ब्र. दीपक भैया को ऐलक विप्रभसागर, ब्र. सरोज दीदी को क्षुल्लिक विराजश्री माताजी नामकरण कर दीक्षा प्रदान की गई।

११ अक्टूबर २०१९ को निवाई (राजस्थान) में प.पू. गणाचार्य श्री के प्रियाग शिष्य श्रमणाचार्य श्री विभव सागर जी महाराज द्वारा बा.ब्र.वीरेन्द्र भैया को मुनि दीक्षा प्रदान कर मुनि शुद्धसागर जी के नाम संस्कार किये।

गोद भराई की गई– इटावा (म.प्र.) में चातुर्मास में साधना रत बालाचार्य मुनिश्री सुरत्नसागर जी के यहां से आये दीक्षार्थी ब्र. अतुल भैया एवं दो दीदीओं की १२ अक्टूबर २०१९ श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन उपवन मंदिर में आयोजन कार्यक्रम में की गई।

प्रोफेशन नैतिकता आध्यात्मिक संगोष्ठी (सेमीनार)

२० अक्टूबर २०१९ को श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन उपवन मंदिर प्रागंण में प.पू. गणाचार्य श्री विरागसागर जी महामुनिराज ससंघ एवं मुनि श्री सुपार्श्वसागर जी महाराज ससंघ के पावन सान्निध्य में सी.ए., इन्जीनियर्स आदि बुद्धिजीवियों की प्रोफेशन नैतिकता आध्यात्मिक दृष्टि कोण विषय पर संगोष्ठी (सेमीनार) का आयोजन किया गया। जिसमें वक्ताओं में श्री सुमेरमल जी चूडीवाल, श्री सन्तोष जी सेठी, श्री सुशील जी गोयल, श्री रीतेश जी, श्री नीतू जी लोहिया,

श्री कमल जी एवं श्री राजेश जी सेठी तथा क्षुल्लिका श्री विज्ञप्ति श्री माताजी, मुनिश्री विकौशल सागर जी महाराज मुनिश्री सुपार्श्वसागर जी महाराज द्वारा उद्‌बोधन दिया गया। अन्त में प.पू. गणाचार्य श्री विरागसागर जी महामुनिराज द्वारा उक्त विषय का प्रति पादन करते हुए अपना समीक्षात्मक मंगल प्रवचन के साथ सभी को अपना मंगल आशीष प्रदान किया।

संगोष्ठी का संचालन श्री विजय सारावगी, विकास जी छावड़ा द्वारा मंगलाचरण श्रीमती नीलम छावडा एवं श्रमणी आ. विश्वास श्री माताजी द्वारा चित्र अनावरण जीतू लोहिया, देवेन्द्र सरावगी, सुशील जी गोयल, रीतेश जी कमलजी, संतोषजी सेठी आदि द्वारा। द्वीप प्रज्वलन- राजेन्द्र जी सेठी, सोनू जैन, श्री सागर जी आदि के द्वारा अन्त में श्री दिगम्बर जैन मुनि संघ व्यवस्था समिति उपसमिति की ओर से श्री मनीष जी गंगवाल द्वारा सभी का आभार प्रदर्शन किया गया।

शिकायतें छोड़ें, खुशी से नाता जोड़ें

कुछ लोगों की आदत होती है बात-बात पर शिकायत करना। हर बात में मीन-मेख, रोना-धोना, चिढ़ना, चिढ़ाना, आलोचना, कुढ़ना ही शामिल होता है। कई बार यह आदत शख्स को शक्की बना देती है। यही नहीं, हर समय अपना और दूसरों का खून जलाने वालों से निकलती नकारात्मक तरंगों से लोग दूरी बना लेते हैं। नतीजतन, अकेलापन और बीमारियाँ घेर लेती हैं। रिश्ता केवल समाज से परिवार से ही नहीं खुद से, खुद की आदतों से और सेहत से भी रखें।

शिकायत अच्छी भी- यदि आपमें आदतनं शिकायत खून में शामिल हो गई है, तो यह आप पर बहुत भारी पड़ेगी। लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि शिकायत से दूरी बना लें। हालांकि, कुछ शिकायत अच्छी वाली भी होती है। या यूँ कहें कि अच्छी और शिकायत में आपको अंतर स्वयं करना होगा। आपके सामने इलाज के दौरान डॉक्टर महिला मरीज के साथ अश्लील हरकत करता है, तो यहाँ आपको शिकायत करनी होगी। यह शिकायत मरीज को इंसाफ दिलाएगी। आपकी कॉलोनी में अवैध तरीकों ६ मंजिला घर बनाया जा रहा है। बिजली से लेकर पानी में चोरी की जा रही है। ऐसे मामले में आपको शिकायत करनी होगी। आपकी शिकायत से समाज का भला होगा।

शिकायत और सेहत- आपको कुछ पसंद नहीं और त्वरित नापसंदी की राय दे दी। यह ठीक है। आखिर पसंद-नापसंद रखने का अधिकार है आपके पास। यदि शिकायत एक लम्हे की है, तो वह नुकसानदायक नहीं। लेकिन इसे आदत नहीं बनाएँ। जहाँ यह आदत आपमें नकरात्मकता से कवरेज करेगी, वहीं सेहत चुरा लेगी। और तो और, आपकी बैड इमेज बनाएगी, जो कई बार रिश्तों से लेकर वर्कप्लेस में हावी हो सकता है। बीते दिनों एक सर्वे में यह सच्चाई निकल कर सामने आई। स्टैंडफोर्ड यूनिवर्सिटी द्वारा वर्ष २०१६ में किए गए एक अध्ययन के अनुसार, शिकायत करने से हमारे हिप्पोकैम्पस पर असर पड़ सकता है, यह दिमाग का वह हिस्सा है, जो मेमरी व लर्निंग से जुड़ा हुआ है। सोचिए जब आप बेवजह एक ही बात घसीटेंगे या मीन-मेख निकालेंगे या अपने या दूसरे को कोसते रहेंगे, तो सेहत पर कुप्रभाव पड़ेगा ही। और तो और शिकायतें ही हावी रहेंगी। खाना-पीना सब प्रभावित होगा। नवीजन शिकायतें खून में घुल मिल जाएंगी, जो बीपी, डिप्रेशन, हार्ट-पेन, माइग्रेन, सांस लेने में दिक्कत आदि का कारण बनेंगी। एक शोध के अनुसार जो लोग कम शिकायती होते हैं, वो ही सफल होते हैं। जब आप शिकायतें नहीं करेंगे और जो जैसा है उसके प्रति शुक्रगुजार होंगे तो तनाव हार्मोन कॉर्टिसोल का स्तर कम होगा। और आप हैप्पी-हैप्पी रहेंगे और काम पर बेहतर फोकस कर पाएंगे।

शिकायत के पीछे कई राज भी- माना कि त्वरित नराजगी व नापसंदी जताना एक सामान्य प्रक्रिया है। इसकी आदत के नशेड़ी स्वयं और समाज के लिए घातक है। पर क्या आपने कभी सोचा है कि व्यक्ति इतनी शिकायत क्यों करता है। इसकी प्रमुख वजह है वो स्वयं को तनाव रहित कर रहा होता। हैरत में नहीं पड़िए। ऐसा होता है। जब किसी बात की नापंसदी को गुस्सा हो तो किसी ओर पर निकाल दो। यकीनन आप स्ट्रेस फ्री और रिलैक्स महसूस करेंगे। कई बार शिकायती टट्टू बनने से मिलती है साहनुभूति और लोगों की और तवज्जो। यही नहीं कई बार शिकायतों का पुलिंदा इतना ज्यादा होता है कि वो शिकायत करने वाले की छवि साफ-सुथरी होती है। और अपनी गलतियों को छुपाने का एक तरीका भी होता है अति शिकायत करना।

अपनी मदद आप करें– शिकायत को नामोनिशान मिटाने का कोई फॉर्मूला नहीं है, लेकिन सेल्फ हेल्प की मदद से कम किया जा सकता है। इसके लिए एक टिप काम करेगी। जब परेशान हों या शिकायतों की बाड़ दिमाग में उफाने मारे, तब एक शिकायत को बोल दें और बाकी सबका मनन करें। एक बोलने से आपका स्ट्रेस लेवल कम होगा और अन्य शिकायतों के मनन से समाधान जरूर निकलेगा। इतना ही मनन करें कि आपका समय और ऊर्जा नष्ट नहीं हो। कोशिश करें कि शिकायतों का हल खोज पाएँ। जब लगे कि सेल्फ हेल्प नहीं हो पा रही, तब अपने राजदार की मदद लें। ऐसे में आपका फोकस शिकायतों का हल हो। साथ ही स्वयं को रोजाना समझाएँ बेफिजूल शिकायतें नहीं करनी हैं।

कैसे पाएं इससे छुटकारा ? – जब कोई किसी भी आदत को छोड़ना चाहता है, तो थोड़ी-बहुत दिक्कत होती है। शिकायत करने की आदत भी ऐसी ही है। विशेषज्ञों का कहना है कि कैलिफोर्निया यूनिवर्सिटी, डेविस के एक अध्ययन के अनुसार, जो लोग कृतज्ञता का एटीट्यूड रखते है, उनमें तनाव हार्मोन कॉर्टिसोल का स्तर कम होता हैं और वे कम ही व्यग्र या परेशान होते हैं। इसके साथ विशेषज्ञों का यह भी कहना है कि जिस पल हम शिकायत करना शुरु करते हैं, हम स्वयं हार मानने वाला एटीट्यूड अपनाने लगते हैं। आपने भी कई बार गौर किया होगा कि अप्रत्यक्ष रूप से हम स्वयं को कहते हैं कि हम स्थिति से निकलने के लिए कुछ भी नहीं कर सकते।

स्वयं पर अधिक भरोसा– ख्याति प्राप्त क्लीनिकल एण्ड चाइल्ड साहकोलॉजिस्ट एवं रिलेशनशिप थेरेपिस्ट डॉ. भावना बर्नी की मानें तो जीवन में एक मौका ऐसा भी आता है जब हम नौकरी का अवसर गंवा देते हैं क्योंकि हमारे मुकाबले कोई बेहतर होता है और वह चुन लिया जाता है।

दैनिक विश्वमित्र से साभार

माँ की शिक्षा और बच्चों के पोषण के बीच होता है सीधा संबंध

सर्वे निष्कर्ष– ३६.२ फीसदी पढ़ी-लिखी और कामकाजी महिलाएँ अपने बच्चों को नियमित रूप से खाना नहीं लिखा पा रही थीं जबकि घर रहने वाली ५०.४ फीसदी माताओं के बच्चे नियमित रूप से भरपूर डाइट ले रहे थे।

भारत में आज भी ग्रामीण क्षेत्र के बच्चों को भोजन के रूप में पूरा पोषण नहीं मिल पाता। इसका सबसे बड़ा कारण माँओं का शिक्षित न होना है। एक शिक्षित महिला अपने बच्चे के स्वास्थ्य की देखभाल उन माताओं से कहीं बेहतर कर सकती है जो शिक्षित नहीं हैं। यह तथ्य हाल ही केन्द्रीय स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय की ओर से आयोजित सर्वे में सामने आया है। सर्वे में बच्चों के स्वास्थ्य एवं शारीरिक पोषण की जाँच की गई।

१.२ लाख बच्चों पर सर्वे– व्यापाक राष्ट्रीय पोषण सर्वेक्षण (सीएनएनएस) के तहत २०१६ से २०१८ के बीच देश भर के करीब १.२ लाख बच्चों में पोषरण संबंधी आंकड़े जुटाए गए। सर्वे में विशेष रूप से बच्चों के भोजन, शारीरिक बनावट, न्यूट्रिएंट्स, एनीमिया, आयरन की कमी की जांच की गई। डेटा विश्लेषण के दौरान माताओं की स्कूली शिक्षा के साथ तुलना करने पर बच्चों के पोषण संबंधी महत्वपूर्ण संबंध सामने आए।

१.२ लाख बच्चों के स्वास्थ्य एवं शारीरिक पोषण का अवलोकन किया गया था सर्वे में ३१प्रतिशत माताएँ जिनके चार साल तक के बच्चे थे, वे कभी स्कूल शिक्षा ग्रहण नहीं कर सकीं।

शिक्षा व काम का असर– सर्वे में सामने आया कि उच्च शिक्षा प्राप्त माताएँ बच्चों को बेहतर आहार दे रही थी। १०-१९ वर्ष की आयु के किशोरों की ५३ प्रतिशत माताओं ने कभी स्कूली शिक्षा ग्रहण नहीं की। केवल ३९ प्रतिशत ने १२ वीं कक्षा तक की पढ़ाई पूरी की थी। यह भी पता चला कि ३६.२ फीसदी कामकाजी महिलाएँ अपने बच्चों को नियमित खाना नहीं खिला पा रही थी जबकि ५०.४ फीसदी घरेलू माताओं के बच्चे नियमित डाइट ले रहे थे।

राजस्थान पत्रिका कोलकाता, से साभार

चेतना में छिपी होती है ज्ञान की गूढ़ता

सब जगह पढ़ाई-लिखाई को बड़ा महत्व दिया जाता है। सब कहते है कि पढ़ लो, शिक्षा ले लो, ज्ञान आ जाएगा। सर्वज्ञता और सर्वसमर्थता आयेगी, लेकिन क्या पढ़ने-लिखने से ही ज्ञान हो जायेगा, सब कुछ आ जाएगा। पुस्तक तो संदर्भ

भर के लिए होती है। ज्ञान का निर्माण तो चेतना में होती है। इसलिए चेतना को जागृत करने की आवश्यकता है।

वास्तविक ज्ञान तो चेतना की जागृति से ही आता है। ज्ञान बौद्धिक रूप से तत्व का प्रकाशक और अंतिम तत्व का शुद्ध बोध हैं। ज्ञान जैसे-जैसे बढ़ता है तब ज्ञान के बढ़ने के मूल में पठन-पाठन नहीं, चेतना की प्रशांत स्थिति ही कारण है, केवल पढ़ने-लिखने से ज्ञान नहीं होता। पढ़ने से जो ज्ञान होता है उसकी सत्ता बहुत गंभीर नहीं होती। इसे भीतर से जागृत करना होता है। इसलिए ज्ञान की प्राप्ति के लिए आवश्यक है कि पहले मूल का शोधन किया जाये। ज्ञान तो होता है, चेतना के शोधन से चेतना जितनी शुद्ध होती जायेगी ज्ञान की स्फूर्ति उतनी ही अधिक चेतना के स्पन्दनों में होती जायेगी। हर एक चेतना का स्पन्दन ज्ञान का रूप है। जब चेतना स्थूल है, तब भी वह ज्ञान का स्वरूप है, वह स्थूल ज्ञान ऐसा होता है जैसे यह फूल लाल है यह स्थूल ज्ञान है। यह लाल किसका बना? जब गंभीरता में गऐ तो ज्ञान सूक्ष्म हुआ, स्थूलता में ज्ञान का अलग स्तर है। सूक्ष्मता में ज्ञान का अलग स्तर ज्ञान, सूक्ष्म चेतना के स्पंदन का सूक्ष्म ज्ञान, ज्यादा महान ज्ञान, ज्यादा विकसित चेतना का ज्ञान। यह चेतना का अव्यक्त निगुर्ण-निराकार शुद्ध स्वरूप है, जो व्यवहार रूप में सगुण-साकार हो जाता है। ठसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि यह ज्ञान जो है वह चेतना का बना है। जितनी अपनी चेतना शांत होगी, वैसा निर्माण कर लेगी। विश्व का निर्माण कर लेगी। राष्ट का निर्माण कर लेगी, कुटुंब का, समाज का निर्माण कर लेगी फिर विश्व का निर्माण कर लेगी। ज्ञान की यह सत्ता नित्य है। जैसा युग होता है, उसी युग के अनुसार जो ज्ञान का माध्यम होता है, उसी माध्यम के अनुसार इसका ज्ञान प्रकट होता जाता है।

यह नित्य ज्ञान है, इसको प्रमाणित करने के लिए और दूसरे प्रमाणों की आवश्यकता नहीं है। केवल इसको जगाने की जरूरत है। इसकी जगाने की युक्ति की, माध्यम की आवश्यकता होती है। इस आधुनिक युग में भी अब भारतीय गुरु पम्परा में गुरुदेव से प्राप्त अपने पास युक्ति भी है और इस युक्ति को सफल बनाने के माध्यम भी हमने बना लिए है।

भावातीत ध्यान ध्यान योग की सर्वाधिक सुगम शैली है। इसमें चेतना सूक्ष्मातिसूक्ष्म ज्ञान के स्तर पर स्पंदित होकर किसी भी विचार और उस पर आधारित कार्यो को सुचारु और सफल बनाती है।

प्रस्तुति दीपाली सिंह सतना

रेलवे में चमड़े की सीट के प्रस्तावित उपयोग ना करने पर जैन समुदाय में खुशी

कोलकाता- भारतीय रेल में चमड़े की सीट के प्रस्तावित प्रयोग का जैन समुदाय ने विरोध व्यक्त किया। जैन समाज के अनुसार रेल में चमड़े की सीट लगने से लाखों निर्दोष मूक पशुओं की निर्मम हत्या होगी। इसे रोकने के लिए जैनस फोर गुड ग्रुप की मुहिम में हजारों लोगों ने सरकार से चमड़े की सीट का प्रयोग ना करने की गुजारिश की। मेनका गांधी ने प्रधानमंत्री कार्यालय से बातचीत का हवाला देते हुए बताया की रेल ने अपनी जरूरतों में तब्दीली करने का फैसला किया है। इस निर्णय से सम्पूर्ण जैन समाज में खुशी है। पश्चिम बंगाल माईनरीटीज कमीशन के पूर्व मेम्बर नारायण जैन, श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महिला महासभा पश्चिम बंगाल अध्यक्ष डॉ. संगीता जैन तथा समाज ने प्रधान मंत्री, रेल मंत्रालय एवं मेनका गांधी समेत सरकार के उन सभी लोगों को धन्यवाद दिया जिनकी वजह से ये सम्भव हो पाया। इस मुहिम में जितेश, सहर्ष, यश, विकास, मनीष, अंकेश, विशाल, अरिहंत जैन का भी योगदान रहा।

खेल नहीं बच्चों की 'परवरिश'

स्नेहा बहुत परेशान रहती है। उसका पांच साल का बेटा डुग्गू बहुत ही शरारती है। खेल-खेल में कई बार बेटे की शरारत स्नेहा पर भारी पड़ जाती है। तंग आकर बेटे को पीट देती है या फिर स्वयं पर आक्रोश करती है। वह बेटे की शरारत पर काबू पाने के हरसंभव प्रयास करती है, मगर बिफल रहती है। स्नेहा जैसी अनेक माँएं हैं जो आज अपने बच्चों की परवरिश को लेकर चिंतित नजर आती हैं। बच्चों को जीवन में नयी गति, नये आयाम, नयी ऊर्जा देने तथा उन्हें यथार्थ व कल्पना में फर्क समझाने में माता-पिता की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। हर माता-पिता के जीवन का उद्देश्य अपनी संतान को योग्य बनाना तथा उनके भविष्य को संवारना होता है।

बच्चों को समय दें- आज के भौतिकवादी युग में अधिकांश माता-पिता दोनों काम करते हैं। इस कारण वे घर-बाहर की थकान के कारण बच्चों के साथ उचित व्यवहार नहीं कर पाते और ना ही बच्चों को उतना समय दे पाते हैं जितना कि बच्चों को दिया जाना जरूरी है। लेकिन जो हाउस वाइफ हैं उनके कंधों पर संपूर्ण-परिवार की इतनी जिम्मेदारी रहती है जिसके चलते वह भी बच्चों के लिए समय नहीं निकाल पाती। समयाभाव के कारण पेरेन्ट्स बच्चों की भावनाओं व विचारों को समझ नहीं पाते। बस बच्चों पर अपने निर्णय थोप देते हैं कि ये करो ये मत करो। अब ये क्यों करना है और ये क्यों नहीं करना, इस बात से बच्चे अनभिज्ञ ही रह जाते हैं। माँ-बाप द्वारा थोपे गये निर्णय बच्चों को स्वाबलम्बी नहीं बनने देते। फलस्वरूप पेरेन्ट्स का यह व्यवहार उनमें डर के साथ विद्रोह की भावना भी पैदा कर देता है। डर के कारण बच्चे कुछ कहते नहीं बल्कि अपने दिमाग में पेरेन्ट्स की छवि ऐसी बना लेते हैं कि वह बड़ों की सही बात को भी गलत मानते हैं। वे पेरेन्ट्स से खुलकर बात नहीं कर पाते बल्कि अपनी बातों को भी आसानी से छिपा जाते हैं। जरूरी है कि माता-पिता घर-परिवार व बाहरी कामकाज के साथ-साथ बच्चों के लिए पर्याप्त समय निकालें। उनके कार्यों में सहयोग करें। सही मार्गदर्शन देते रहें। उन पर अपने निर्णय थोपने की बजाय अच्छे-बुरे की पहचान करना बताएँ और बच्चों के कार्यों की प्रशंसा करना न भूलें।

बच्चों के दोस्त बनें- बच्चों के दोस्त बनकर रहें, खौफ बनकर नहीं। बच्चों की भी अपनी दुनियाँ होती है, जिसमें उनके साथ कुछ दोस्त होते हैं। बच्चों का काफी समय दोस्तों के साथ पढ़ने-घूमने-फिरने व आने-जाने में बीतता है। दोस्तों की संगति का उनपर अच्छा हो या बुरा प्रभाव बहुत जल्दी पड़ता है। बच्चों के दोस्त बनकर रहेंगे तो बच्चा आपके साथ अपनी हर अच्छी-बुरी बात को शेयर करेगा। इसलिए दोस्त बनकर बच्चे की सभी बातें व समस्याएँ सुनें तथा बाद में शांतिपूर्ण ढंग से, धैर्य से व प्यार से समस्या का हल खोजें। फिर बच्चे को समझाएँ और अच्छे-बुरे की सीख दें।

भावनाओं को समझे- आज टेलीविजन बच्चों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इससे बच्चें नैसर्गिक रूप से काफी जिज्ञासु होने लगे हैं। वे हर उस बात को स्पष्ट करना चाहते हैं जो वे देखते व सुनते हैं। ऐसी परिस्थितियों में बच्चों को सही व गलत के बीच का अंतर पता होना आवश्यक है। देखा गया है कि जो अभिभावक बच्चों की भावनाओं को समझते हैं व उनकी समस्याओं को गौर से सुनते हैं तो उनके बच्चे, उनसे बात करने में खुद को सुविधाजनक स्थिति में महसूस करते हैं। ऐसे हालात में उनके ईमानदार होने की संभावनाएँ भी कई गुना बढ़ जाती है।

उपदेश नहीं सुझाव दें- किसी भी समस्या के हल के लिए बच्चे को उपदेश नहीं सुझाव देकर समझाने का प्रयास करें। बच्चे की बात व सुझाव को भी महत्व दें। इससे वह अपनी हर समस्या के समाधान के लिए आपके व अपने सुझावों का आदान-प्रदान करने में दिलचस्पी रखेगा।

आत्मविश्वास जगाएँ- बच्चों को स्वयं निर्णय लेने के पर्याप्त अवसर दें तथा प्रेरित करें। वे क्या करना चाहते हैं, क्या पसंद करते हैं या उन्हें भविष्य में क्या बनना है, आदि निर्णय खुद लेने दें। किसी भी निर्णय में उनका, सहारा बनें ना कि अपनी पसंद थोपकर उनके आत्मविश्वास को डगमगाएँ। एक आठ वर्ष की बच्ची अपने जन्मदिन पर अपने एक-दो या ढेर सारे दोस्तों को आमंत्रित करना चाहती है तो ये निर्णय उसे ही लेने दें। पढ़ाई के साथ-साथ, लड़की हो या लड़का, उन्हें अपनी पसंद के अनुसार नृत्य, खेल, घुडसवारी आदि करने दें। बच्चों की सही पसंद की प्रशंसा करें।

स्कूलों की सक्रिय भूमिका- पिछले कुछ वर्षों से ये देखा गया है कि बच्चों के सही विकास व मार्गदर्शन के लिए माता-पिता को क्या कदम उठाने चाहिए क्या नहीं ? इस बावत पब्लिक स्कूलों में बाकायदा ओरियेन्टेशन प्रोग्राम रखे जाते हैं। जहाँ मन: स्थिति एक्सपर्ट बच्चों के माता-पिता को सीख देते हैं कि किस सिचुएशन में क्या करना चाहिए क्या नहीं। बाल विशेषज्ञ श्रीमती सहगल बताती हैं कि वह बच्चों व उनके माता-पिता से मिलते हैं तथा उनसे डिटेल में बच्चों के दिनभर के क्रियाकलापों तथा उनकी आदतों का लेखा जोखा तो एकत्रित करते ही है साथ ही उनका ये जानना आवश्यक हो जाता है कि माता-पिता का अपने बच्चों की तरफ कैसा रूझान है, कितना समय बच्चों को देते हैं आदि-आदि। उसके बाद ही वह किसी निर्णय पर पहुँचती हैं फिर माता-पिता को समझाती हैं कि इस कम्प्यूटरी युग में बच्चों की परवरिश ऐसी हो जिससे बच्चे आज के माहौल में खुद को स्थापित कर सकें।

दैनिक विश्वमित्र, कोलकाता से साभार

विराग वर्ग पहेली 47

उदाहरण - र वि रा ग नहीं करना चाहिए। (प.पू. गणाचार्य गुरुवर का नाम) जैसे-विराग

मा	र्ग	प्र	भा	व	ना	है	श
द्धि	धि	क्ति	पा	क्ति	व	क्ति	ता
शु	मा	भ	भ	भ	त्स	न	न्न
वि	स	र्थ	ब	त	डे	गु	म्प
न	धु	चा	प	श्रु	ई	रू	स
र्श	सा	आ	ग	हु	व	अ	य
द	र	वे	के	ब	च	र	न
ण	सं	त्ति	वृ	य्या	वै	सौ	वि

विराग वर्ग पहेली 46 के उत्तर

(1) रत्नकरण्ड श्रावकाचार
(2) रयणसार
(3) मूलाचार
(4) आचार सार
(5) सागर धर्मामृत
(6) वसुनंदि श्रावकाचार
(7) अमितगति श्रावकाचार
(8) चारित्र सार
(9) पुरुषार्थ सिद्धि उपाय
(10) सावय धर्म दोहा

नोट- (1) आपको इसमें १६ कारण भावनाओं के नाम खोजना हैं।
(2) जहाँ उत्तर मिले वहाँ ☐ डब्बा बनाये व क्रम से नाम लिखें।
(3) उदा.- इसमें नाम आड़े, तिरछे, ऊपर से नीचे, नीचे से ऊपर भी हो सकता है।

उत्तर भेजनेवाले का नाम व पता (स्पष्ट तथा शुद्ध)

नाम .....मो. .....

पिता/पति का नाम .....

पता .....